chapter- 4

अध्याय चार

गुजरात में हिन्दी काव्य-साहित्य का क्रमिक विकास

15वीं शताब्दी से पूर्व का काव्य-साहित्य (नरसिंह महेता से पूर्व)

15वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

16वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

17वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

18वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

19वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

20वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

गुजरात में हिन्दी-काव्य-साहित्य का क्रमिक विकास

आचार्य हेमचन्द्रसूरि से लेकर आधुनिक काल के अनेक कवियों ने गुजरात में हिन्दी-काव्य-साहित्य को समृद्ध किया है। गुजरात में सैकड़ों की संख्या में हिन्दी में रचना करने वाले कवि हुए हैं। आज भी कितने ही ग्रंथ-भण्डारों में हस्तलिखित पोथियों में ज्ञात-अज्ञात अनेक कवियों की रचनाएँ दबी पड़ी हैं। गुजरात में प्राचीन काल से आज तक जैन-काव्य, कृष्ण-काव्य, राम-काव्य, सन्त-काव्य, सूफी-काव्य, रीति-काव्य, आधुनिक-काव्य आदि विभिन्न प्रकार के काव्य-साहित्य की रचना हुई।

गुजरात में हिन्दी-काव्य-साहित्य के क्रमिक विकास को जानने के लिए हमें गुजरात में उपलब्ध हिन्दी साहित्य के इतिहास को जानना जरूरी है। गुजरात में विकसित हिन्दी भाषा साहित्य को समय-निर्धारण की दृष्टि से डॉ0 रमण लाल पाठक ने निम्नलिखित काल-खण्डों में बाँटा है:

"प्रथम सोपान: अर्थात् आदिकाल ...1100 से लेकर 1500 तक अर्थात् हेमचन्द्र सूरि से माणिक चन्द्र सूरि तक।

द्वितीय सोपान: अर्थात् मध्यकाल...1501 से 1860 तक अर्थात् नरसिंह महेता से लेकर दयाराम तक।

तृतीय सोपान: अर्थात् आधुनिक काल...1861 से लेकर अद्यावधि तक अर्थात् दलपतराम से सुन्दरम् तक।"[1]

डॉ0 नागर ने 15वीं शती से आधुनिक काल के प्रारंभ तक के समय को मध्यकाल की संज्ञा दी है। डॉ0 अम्बाशंकर नागर के अनुसार, *"15वीं शती से लेकर आधुनिक काल के प्रारंभ तक के गुजरात के अंचल से प्राप्त मध्यकालीन हिन्दी साहित्य को अध्ययन की सुविधा के लिए हम निम्नलिखित सात भागों में विभाजित कर सकते हैं-*

1. *वैष्णव कवियों की हिन्दी कविता ।*
2. *स्वामिनारायण-सम्प्रदाय के कवियों की हिन्दी कविता ।*
3. *संत कवियों की हिन्दी कविता ।*
4. *जैन कवियों की हिन्दी कविता ।*
5. *सूफ़ी कवियों की हिन्दी कविता ।*
6. *राजा और राजाश्रित कवियों की हिन्दी कविता ।"*[2]

डॉ0 रामकुमार गुप्त ने संवत् 1250 से 1900 विक्रम तक के समय को दो भागों

में बाँटा है-

1) *प्रस्तावना काल : सं0 1250 से 1550 तक*

2) *मध्यकाल : सं0 1550 से 1900 तक*

(अ) पूर्व मध्यकाल (सं0 1550 से 1750 वि0)

(ब) उत्तर मध्यकाल (सं0 1750 से 1900 वि0)[3]

गुजरात में प्राप्त हिन्दी-काव्य-साहित्य के क्रमिक विकास को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से मैंने शताब्दीवार बाँटा है-

1. 15वीं शताब्दी से पूर्व का काव्य-साहित्य,
2. 15वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य,
3. 16वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य,
4. 17वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य,
5. 18वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य,
6. 19वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य,
7. 20वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य ।

15वीं शताब्दी से पूर्व का काव्य-साहित्य (नरसिंह महेता से पूर्व)

लगभग सन् 500 ई0 से गुजरात की साहित्यिक भाषा अपभ्रंश थी। 12वीं शताब्दी से नरसिंह महेता की उत्पत्ति तक का समय गुजरात में भाषा की उन्नति का समय रहा। नरसिंह महेता की उत्पत्ति से पहले तक गुजरात में अपभ्रंश भाषा में साहित्य-रचना होती रहीं जिसमें से अधिकांश साहित्य जैन कवियों द्वारा रचा गया। ***उद्योतन सूरि*** (779 ई0) की ***'कुवलयमाला'*** अपभ्रंश में लिखा एक उत्तम ग्रंथ है। यह प्राकृत में है जिसमें अपभ्रंश के पद आए है, साथ मे गद्य का भी कहीं-कहीं समावेश हुआ है। हेमचन्द्र से एक या दो शताब्दी पूर्व हुए कवि ***धनपाल*** ने 22 संधियों में एक अपभ्रंश-काव्य की रचना की जिसका नाम ***'भविस्सत्त कहा'*** या ***'पञ्चमी कहा'*** है।

हेमचन्द्र में अपने व्याकरण में सरल और सुन्दर अपभ्रंश भाषा में स्वयं के तथा दूसरे कवियों के पौराणिक, धार्मिक, उपदेशात्मक शृंगारिक तथा वीर भाव से युक्त उद्धरण दिये है। एक उदाहरण देखिए-

''भल्ला हुआ जो मारिआ, वहिणि म्हारा कंतु।
लज्जेजंतु बयंसियहु, जइ भग्गा घर एंतु।।''[4]

'मुञ्जराज प्रबन्ध' में भी अपभ्रंश के उत्तम दोहे मिलते है-

''गय गय रह गय तुरय गय, पायक्कडा नि भिच्च।
सग्गर् ठिय करि मन्तणउं, मुहुन्ता रुद्दाइच्च।।''[5]

इसमें मुंज कहता है- हे रुद्रादित्य! हाथी, रथ, घोड़े, योद्धा- इन सबसे रहित होकर बिना सेवकों के मैं यहाँ खड़ा हूँ, मुझे अपने पास बुला लो। तुम स्वर्ग में हो और मैं तुम्हारी ओर मुँह करके खड़ा हूँ।

ये दोहे छोटे, अत्यन्त मधुर तथा सबल शैली में लिखे गये हैं।

'भरतेश्वर बाहुबलिरास' प्रथम प्राप्य ग्रंथ है जिसकी रचना शालिभद्र सूरि ने 1185 ई0 में की थी। ये भीमदेव द्वितीय के समय पाटण में हुए थे। इसमें भरत और बाहुबलि के साथ तीर्थंकर ऋषभदेव के बीच हुए युद्ध का वर्णन है। बाद में बाहुबलि अपने तप और त्याग के बाद ज्ञान प्राप्त करता है। इसमें वीर रस की प्रधानता है और अन्त में शान्त रस है। दोहा, सोरठा, रोला, चौपाई आदि मात्रामेल छन्दों की भाँति ठवणी की 203 कड़ियों में इनकी रचना हुई है।

जैनों द्वारा सैंकड़ों की संख्या में रास और प्रबन्ध लिखे गए। ये रचनाएँ काव्य तत्त्व के अभाव तथा पूर्व की रचनाओं का अनुकरण करने के कारण आकर्षित नहीं करती तथापि भाषा एवं भाषा-विज्ञान की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

महेन्द्र सूरि के शिष्य धम्म द्वारा रचित ***'जम्बूस्वामी रास'*** में सीधी-सरल भाषा में जैन साधु जम्बूस्वामी का जीवन चरित लिखा गया है। ***विजयसेन सूरि*** का 'रेवन्तगिरि रासु' इसकी अपेक्षा श्रेष्ठ ग्रंथ है। इसमें काव्य-तत्त्व के साथ गेयता और अभिनेयता भी है।

विनयचन्द्र सूरि की 14वीं शताब्दी की रचना ***'नेमिनाथ चतुष्पदिका'*** में लिखा बारहमासी गीत अब तक प्राप्त सर्वप्रथम बारहमासी गीत है। इसमें नायक-नायिका का थोड़े वियोग के पश्चात् पुनर्मिलिन होने से विप्रलम्भ शृंगार की प्रधानता है। इसी समय अज्ञात कवि द्वारा रचित ***'सप्तक्षेत्रि रासु'*** भी मिलता है, जिसमें धार्मिक कृत्यों का वर्णन मिलता है। ***जिनेश्वर सूरि*** का विवाहलु भी मिलता है। 'पेथड रास' में पाटण के समीप सेडेर के पेथडशाह द्वारा संघ निकालने का वर्णन है। इसी प्रकार सं0 1363 में रचित ***'कछूलीरास'*** में उदयसिंह सूरि की वीरता का वर्णन मिलता है। ऐतिहासिक दृष्टि से तथ्यों की सूचना भी इससे मिलती है।

अपभ्रंश में रचित धवल भी मिलते है जिनमें से एक में जिनप्रभसूरि की स्तुति की गई है। धवल विशेष अवसरों पर गाये जाने वाले गीत हैं।

इस काल में रची गई फागु रचनाओं में अब तक प्राप्त सर्वप्रथम फागु 14वीं

शताब्दी में लिखा ***'सिरिथूलिभद्द फाग'*** है। इसमें स्थूलिभद्र के राजनर्तकी कोशा से प्रेम और बाद में पश्चाताप के बाद सन्यास लेने की कथा है।

इस शताब्दी का दूसरा फागु 'नेमिनाथ फागु' है।

जैनेतर काव्यों में सिद्धपुरपाटण के औदिच्य ब्राह्मण कवि ***असाइत*** कृत ***'हंसाउली'*** उल्लेखनीय (1371 ई0 में रचित) है जिसे हिन्दी का प्रथम ज्ञात प्रेमाख्यानक काव्य माना गया है।

असाइत सुत मांडण भवैया (मांडण बंधारो से भिन्न) की, उपदेशात्मक जकड़ियाँ महीपतराम नीलकंठ (1864) द्वारा संपादित 'भवाई संग्रह-2' में मिलती हैं।

15वीं शताब्दी से पूर्व की काव्य-रचनाओं में ईडर (उ0 गुजरात) के राठौर नरेश रणमल जी के दरबारी कवि श्रीधर व्यास कृत 'रणमल छन्द' (संवत् 1454) स्वरूप की दृष्टि से उल्लेखनीय कृति है।

15वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

नरसिंह महेता

गुजरात के वैष्णव भक्त कवियों में नरसिंह महेता का नाम सर्व मुखर है। नरसिंह महेता गुजराती-साहित्य के आदि कवि भी माने जाते हैं। इन्होंने राधाकृष्ण की शृंगारिक लीलाओं के निरूपण के साथ-साथ वेदान्त विषयक पदों की भी रचना की है।

नरसिंह महेता एक वडनगरा नागर ब्राह्मण (गृहस्थ) थे। इनका जन्म जूनागढ़ के तलाजा गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम कृष्णदास तथा माता का नाम दयाकुंवर था। इनके जीवन काल के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। एक तरफ कवि नर्मदा शंकर, ईच्छाराम देसाई, श्री काँटावाला तथा श्री के0 का0 शास्त्री विद्वानों के अनुसार संवत् 1469-70 इनका जन्म समय माना जाता है,[6] तो दूसरी तरफ क.मा. मुंशी, श्री नरसिंह दीवटिया, श्री जगदीश गुप्त, डॉ0 अम्बाशंकर नागर सम्वत् 1530 के बाद का समय मानते हैं।

नरसिंह महेता के पदों पर जयदेव कृत 'गीत गोविंद' का प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। डॉ0 रमणलाल पाठक ने गुजराती साहित्य परिषद, अहमदाबाद द्वारा 1976 में प्रकाशित 'गुजराती साहित्य नो इतिहास, खण्ड-2' में पृ0 91 पर उमाशंकर जोशी द्वारा नरसिंह का जन्म वर्ष सन् 1414 के आसपास और मृत्यु वर्ष 1480 के आसपास को स्वीकार किया है।[7] इस प्रकार नरसिंह महेता को पन्द्रहवीं शताब्दी का मानना उचित लगता है।

नरसिंह महेता ने 'सुदामाचरित्र', 'गोबिन्द गमन', 'दानलीला', 'चातुरिओं', 'सुरत-संग्राम', 'रास-सहस्रपदी', 'शृंगारमाला', 'वसन्तनां पदो', 'हिंडोलानां पदो',

'कृष्ण जन्मनां पदो', 'हारमाला', 'शामलदासनो विवाह' आदि छोटी-बड़ी 27 रचनाएँ लिखी हैं। इनके द्वारा रचित कुछ हिन्दी ब्रजभाषा के पद भी मिलते हैं, जिनकी प्रामाणिकता संदिग्ध ही है। नरसी द्वारा हिन्दी में रचित कहे जाने वाले पद का उदाहरण देखिए-

''म्हाने पार उतारो जी, थांने निज भक्तन की आन।
हमरे अवगुन नेक न चितवो, अपनो ही करी जान ॥1॥

o o o

हों तो कुटिल अधम अपराधी, नहिं सुमरियो तेरी नाम।
नरसी के प्रभु अधम उधारन, गावत वेद पुरान ॥4॥''[8]

नरसी महेता के पदों में उत्कट प्रेमपूर्ण गोपी भाव के साथ विनय, दैन्य, अनुभूतिपूर्ण ज्ञान एवं वैराग्य का उत्कृट निवेदन हुआ है।

पद्मनाभ

पद्मनाभ विसनगरा नागर थे जो चौहान राजा अक्षयराज के राजकवि थे। अक्षयराज कान्हड़दे महाराज की पाँचवी पीढ़ी में हुए थे। पद्मनाभ ने राजा अक्षयराज की प्रेरणा से ***'कान्हड़दे प्रबन्ध'*** की रचना मार्गशीर्ष शुक्ल 15, सं0 1512 सोमवार को पूरी की। इस काव्य में अलाउद्दीन खिलजी के साथ हुए युद्ध में कान्हड़दे के देश के लिए बलिदान होने का वर्णन किया गया है। मुनि जिनविजयजी ने पद्मनाभ को महाकवि कहा है। इसे पुरानी गुजराती अथवा पुरानी राजस्थानी का सर्वोत्तम ग्रंथ माना है।

भालण

गुजरात प्रदेश के प्रथम मध्यकालीन हिन्दी-कवि के रूप में डॉ0 नागर द्वारा मान्य 'भालण' से गुजरात में ब्रज भाषा में रचना करने वाले वैष्णव कवियों की परम्परा प्रारंभ होती है। गुजरात में स्वामी रामानन्द द्वारा प्रचारित राम-भक्ति से प्रभावित हो राम के बाल-जीवन की क्रीड़ाओं के माध्यम से वात्सल्य रस का निरूपण करने के साथ-साथ भालण ने श्री मद् भागवत के दशम स्कन्ध पर आधारित अपने 'दशम स्कन्ध' में गुजराती और ब्रज भाषा में सुन्दर पद-रचना की है। भालण ने राम की बाल-लीलाओं के साथ-साथ कृष्ण लीलाओं का भी निरूपण किया है-

''कौन तप कीनोरी माई नंदराणी, कौन.
ले उछंग हरिकुं पय पावत मुख चुंबन मुख भीनोरी मा.
तृप्त भये मोहन ज्युँ हसत है तब उमगत अधरहु कीनोरी मा.
जसोमती लटपट पूँछत लागी बदन खेचित बलिनोरी मा.[9]

भालण का मूल नाम पुरूषोत्तम था। वे गुजरात के पाटण नगर के निवासी थे। इनके पिता का नाम मंगलजी था। वे त्रिवेदी मोढ़ ब्राह्मण थे।

भालण की उपस्थिति लगभग सन् 1426-1500 ई0 के आस-पास मानी जाती है।[10] भालण के समय के बारे में अभी विद्वानों में बड़ा मतभेद है। भालण-कृत 'द्वितीय नलाख्यान' के अनुसार कवि की उपस्थिति संवत् 1545 (अर्थात् सन् 1489 ई0) बहुमान्य है।[11]

भालण के इस उपस्थिति संवत् और पदों को यदि प्रामाणिक माना जाए, तो इस गुजराती कवि को सूरदास से भी पहले ब्रजभाषा में काव्य-रचना करने का गौरव प्राप्त होता है।[12]

भीम (सन् 1485 ई0 में विद्यमान)

भीम कवि ***'हरिलीला-षोडश कला'*** और ***'प्रबोध-प्रकाश'*** के रचयिता हैं। इनके जन्म संवत् का कहीं उल्लेख प्राप्त नहीं होता तथापि उनकी रचनाओं में उनकी रचना के वर्ष का उल्लेख मिलता है। 'हरिलीला-षोडशकला' की रचना सं0 1541 में[13] और 'प्रबोध-प्रकाश' की रचना संवत् 1546 में[14] हुई। भीम के जन्म-स्थान एवं निवास-स्थान के सम्बन्ध में कोई विश्वसनीय प्रमाण नहीं मिलता। परन्तु ऐसा माना जाता है कि उनका जन्म स्थान सौराष्ट्र में स्थित प्रभास पाटण था।[15] कवि ने 15वीं शताब्दी के वैष्णव-साहित्य में अच्छा योगदान किया है।

डॉ0 सुमनराजे ने पाटण निवासी अजैन रचनाकार भीम कृत ***'सदयवत्स वीर प्रबन्ध'*** (सन् 1410 ई0) नामक प्रेमाख्यानक काव्य का उल्लेख किया है।[16]

मांडण :(सं 1536 में जन्म)

मांडन बंधारो का जन्म पन्द्रहवीं शताब्दी का अन्तिम भाग माना जाता है।[17] अखा को उर्वरा काव्य-भूमि मांडण से परम्परागत प्राप्त हुई वह किसी से छिपी नहीं है।[18] इनकी माता का नाम मेघू तथा पिता का नाम हरि था। ये सिरोही के बंधारो जाति के तथा जोशीमदन के शिष्य थे।[19]

इनके ग्रंथों में ***'प्रबोध बत्रीसी', 'रामायण', 'रूक्मांगद कथा', 'सतभामानुं रूसणुं'*** हैं।[20] 'प्रबोध बत्रीसी' में 32 वीशी है और प्रत्येक वीशी में 20 षट्पदी चौपाइयाँ हैं। इसमें लोक-मानस में प्रचलित पाँच सौ के लगभग कहावतों का समावेश किया है।

मांडण का एक हिन्दी पद का उदाहरण देखिए-

''भजन करो राम का माई, छांड सब तन की चतुराई,
गरूरीछांड दे घेली, आखर काको नहीं बेली....भजन

करे बन्दगी सोई बंदा, जीते जिन्दगी सोई जंदा

फकीरी सोई रहत है फरता, साधु सोई रहत है रमता...भजन...'[21]

इनकी कुछ जकड़ियाँ भी मिलती हैं। इनके हिन्दी पदों की प्रामाणिकता भी संदिग्ध है।

शेख बहाउद्दीन 'बाझन' (सं0 1444 से 1562)

इनका जन्म अहमदाबाद में हुआ था। इनका समय पन्द्रहवीं शती का उत्तरार्द्ध माना जाता है। गाने बजाने के शौक के कारण इनका उपनाम 'बाझन' पड़ा। सूफी-सन्तों में इनका नाम अत्यन्त प्राचीन तथा प्रमुख है। इनका गूजरी-काव्य ***'ख़जाइन रहमत'*** में संगृहीत है।

काज़ी महमूद दरियायी

गूजरी के दूसरे प्रमुख कवि काज़ी महमूद दरियायी का जन्म सन् 1469 ई0 में बीरपुर जिला खेड़ा, गुजरात में एक सूफी परिवार में हुआ। इनका गूजरी-काव्य ***'तोहफ़तुलकारी'*** में मिलता है। प्रेमलक्षणा भक्ति में डूबे काव्य में विरह की वेदना का चित्रण है।

पन्द्रहवीं शताब्दी के जैन कवियों में ***भट्टारक सकल कीर्ति, हीरानन्दसूरि, ब्रह्मजिनदास, श्रावक देपाल, संघविमल, ऋषिवर्धन*** आदि उल्लेखनीय हैं।

15वीं शताब्दी के ज्ञान भक्ति धारा कवियों में ज्ञानी जी, निर्वाण साहब, नायाणी भाभाराम उल्लेखनीय हैं।

ज्ञानी जी (जन्म ई0 स0 1395 में) जैसलमेर के भट्टी राजा मोती सिंह के राजकुमार थे। रामानन्द स्वामी के आग्रह से इन्होंने कबीर साहब का शिष्यत्व ग्रहण किया। इन्होंने ई0 स0 1502 में जीवित समाधि ली थी। इनकी रचनाओं में ***'ज्ञानदीपक चन्द्रयन', 'साखी ग्रंथ' 'ज्ञान बत्तीसी शब्द पारखी)' 'रामसार ग्रंथ', 'राम महिमा' 'कबीर ज्ञानी संवाद'*** और कुछ फुटकल पद हैं। अनेक भाषाओं के ज्ञाता होने के कारण इनकी रचनाओं में हिन्दी, फारसी, गुजराती, राजस्थानी, संस्कृत आदि भाषाओं का असर देखा जा सकता है।

निर्वाण साहब का समय ई0 स0 1421 से 1514 तक माना जाता है। इनके शिष्यों में सांई सोदात खां, गोपीनाथ, जंभाराम, आभाराम, कवयित्री अन्नपूर्णा प्रमुख हैं। इनके द्वारा रचित 40 साखियाँ ही उपलब्ध हैं। उन्होंने पद, झूलना, भजन, कुंडलियाँ, साखी आदि की रचना की हैं। किन्तु इनकी छिपपुट रचनाएँ ही उपलब्ध हैं।

नायाजी (ई0 स0 1455 से 1533 तक) का जन्म कोली कुल में हुआ था। इनके पूर्वज और नायाजी स्वयं बहुत बड़े लुटेरे थे। सद्गुरु के वचनों से ये भजनिक संत बन गए। इनकी शुद्ध ब्रजभाषा में लिखी 13 साखियाँ मिलती हैं।[22]

भाभाराम का जन्म वसो गाँव (जिला खेड़ा) में ई0 सन 1449 में हुआ और मृत्यु सन् 1523 ई0 में हुई। इनके शिष्यों में कीकीबाई, मेघावती, संत मुक्तिराम, गंगासिंह, भोजराज प्रमुख थे। इनकी ब्रजभाषा में लिखी 13 फुटकल साखियाँ मिलती है।

16वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

सोलहवीं शताब्दी में वैष्णव भक्त कवियों, निर्गुण संतों, चारण कवियों विभिन्न सम्प्रदायों से जुड़े हुए कवियों तथा सम्प्रदाय मुक्त कवियों की काव्य-रचनाएँ मिलती है।

मीराँबाई (सं0 1531-सं0 1603 वि.)

मीराँबाई यद्यपि जन्म से गुजराती नहीं थी तथापि उनके जीवन के प्राय: अन्तिम 15 वर्ष गुजरात में ही व्यतीत हुए थे।[23] मीराँबाई की गणना गुजरात के आदि कवियों में होती है। मीराँ का जन्म श्रावण सुदी 1, शुक्रवार, सम्वत् 1531 में राजस्थान के कुड़की गाँव में हुआ था। इनकी माता का नाम वीर कुँवरी तथा पिता का नाम रतनसिंह था। ये मेड़तिया कुल के राठौड़ थे। बारह वर्ष की आयु में भोजराज से विवाह हुआ पर कुछ समय में विधवा हो गई। भजन तथा सत्संग में लीन रहने के कारण ससुराल वालों ने इन्हें विविध प्रकार के प्राणान्तक कष्ट (जैसे जहर का प्याला पीने को देना) दिए। अन्तत: क्षुब्ध हो कर वे द्वारका आ गई और सं0 1603 में रणछोड़राय के चरणों में प्राण त्याग दिये।

मीराँ प्रमुखतया कृष्णभक्त कवयित्री हैं। उनके पदों में संत-परम्परानुमोदित शब्दावली भी मिलती है। इनके पदों में रैदास का गुरु के रूप में उल्लेख मिलता है परन्तु इसकी प्रामाणिकता संदिग्ध है। मीराँबाई के नाम छाप वाले हिन्दी-गुजराती पदों की संख्या 1407 के लगभग है लेकिन इनका मीराँ की प्रामाणिक रचनाएँ होने में सन्देह है।

मीराँबाई का सम्पर्क जन्म के कारण मारवाड़ी से, विवाह के कारण मेवाड़ी से, वृन्दावन निवास के कारण ब्रजभाषा से तथा द्वारका में रहने से गुजराती से स्थापित हुआ। इन सभी भाषाओं में मीराँबाई की रचनाएँ उपलब्ध हैं।[24] मीराँ के पदों में मधुरता, कोमलता, तन्मयता, भावुकता, गेयता, और संयम है। भाषा सरल और सरस है। मीराँ के पदों का उदाहरण दृष्टव्य है-

"मैं गिरधर रंग राती, सैयां, मैं गिरधर रंग राती-
पचरंग चोला पहर सखीरी, मैं झिरमिट खेलन जाती;
झिरमिट में मोहि मोहन मिलियो, खोल मिली तन गाती"-[25]

बैजु बावरा (1535 ई0 में विद्यमान)

गुजरात के वैष्णव कवियों की परम्परा में संगीतज्ञ बैजु बावरा का स्थान बहुत

ऊँचा है। इनका मूल नाम वैजनाथ था और ये चंपानेर के निवासी थे। गुजरात के बादशाह बहादुरशाह के दरबार में इनका आदरणीय स्थान था। नर्मदेश्वर चतुर्वेदी जी ने ***'संगीतज्ञ कवियों की हिन्दी कविता'*** नामक ग्रंथ में बैजु की कई रचनाओं का संकलन किया है।[26] इन रचनाओं में संगीत-तत्त्व, काव्य-तत्त्व और कृष्ण भक्ति की त्रिवेणी प्रवाहित हुई है।

महान संगीताचार्य होने के साथ-साथ बैजु उच्च कोटि के कृष्ण भक्त कवि एवं गायक थे। कृष्ण की लीला माधुरी को विषयाधार बनाकर अनेक भक्तिपूर्ण एवं मधुर (गेय) पदों की रचना गुजराती तथा कुछ ब्रजभाषा में की।

विरह-वर्णन में बैजु ने उद्दीपनों तथा अन्य कवि परिपाटी के उपकरणों का प्रयोग नहीं किया है। बड़ी सहज और निरलंकृत भाषा में उन्होंने प्रिय वियोग-वेदना को व्यक्त किया है।

ब्रज भाषा में राग तोड़ी में निबद्ध यह पद उनकी अनन्य कृष्ण भक्ति का परिचायक है-

''मेरे तो कृष्ण नाम आधार जिन पर रच्यो संसार।
जग असार लोभ तृष्णा काम क्रोध तजों जैणार।।''[27]

कृष्णदास अधिकारी (1497-1580 ई0)

पुष्टिमार्ग के अष्टछाप कवियों में क्रमशः कुंभनदास, सूरदास और परमानंददास के पश्चात् चतुर्थ स्थान पर आने वाले कृष्णदास गुजरात के अहमदाबाद जिले के चिलोतरा गाँव के किसी कुनबी परिवार में जन्में थे। भक्ति प्रधान मानसिकता के कारण 13 वर्ष की अल्पायु में ही घर छोड़ ब्रज की ओर चल पड़े जहाँ वे वल्लभाचार्य के शिष्य बने। प्रारम्भ में श्रीनाथ जी के मन्दिर के भण्डार एवं भेंट-संग्रह का कार्य करते थे। इसीलिए 'अधिकारी जी' कहलाते थे। मन्दिर के कारोबार से समय मिलने पर वे अध्ययन एवं काव्य-संगीत के अभ्यास में लग जाते।

काँव्य-संगीत में निपुण, साम्प्रदायिक सिद्धान्त और सेवा विधि के पूर्ण ज्ञाता कृष्णदास जी सुदक्ष कवि, गायक, कीर्तनकार एवं उत्कट सेवाभावी थे। साहित्य-सर्जन की विपुलता की दृष्टि से पुष्टमार्ग में सूरदास और परमानन्द दास के बाद तीसरा इनका स्थान है। आचार्य शुक्ल के अनुसार- ***''इन्होंने भी और सब कृष्ण भक्तों के समान राधाकृष्ण के प्रेम को लेकर शृंगार रस के ही पद गाए हैं। इनका 'जुगलमानचरित' नामक एक छोटा-सा ग्रंथ मिलता है। इसके अतिरिक्त इनके दो ग्रंथ और कहे जाते हैं- 'भ्रमरगीत' और 'प्रेम तत्त्व निरूपण'। फुटकर पदों के संग्रह इधर-उधर मिलते हैं।.***

.. इनकी कविता साधारण कोटि की है।''[28]

निम्नलिखित पद कवि की श्री कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति-भावना तथा शब्द-विधान-कुशलता, भाषा की तत्समता एवं मुहावरों का प्रयोग की दृष्टि से दृष्टव्य है-

''मो मन गिरधर छवी पर अटक्यौ।।
ललित त्रिभंगी अंगन उपर चलि, गयो तहाँई ठटक्यो।
सजल स्याम-घन नील बरन है फिर चित अनन न भटक्यो।
'कृष्णदास' कियो प्रान न्यौछावरी, ये तन जग सिर पटक्यो।''[29]

कृष्णदास पहले गुजराती में रचना करते थे परन्तु बाद में शुद्ध ब्रजभाषा में पदरचना करने लगे। इनके श्रृंगारपूर्ण पदों में सुन्दर तत्सम ललित पदावली युक्त भाषा का प्रयोग हुआ है।

केशवदास कायस्थ

नरसिंह और भालण की भाँति वैष्णव भक्ति के एक और समर्थ कवि के रूप में प्रभास-पाटण (सौराष्ट्र) के कवि कीर्तनकार केशवदास उल्लेखनीय हैं। इनके गुजराती ग्रंथ ***'श्री कृष्ण क्रीडा काव्य'*** (ग्रन्थ समाप्तिकाल संवत् 1529) के 14वें एवं 16वें सर्गो में ब्रजभाषा के दो पद मिलते हैं, जिसमें एक पद 40 पंक्तियों का है। पहले पद में राधा के मान का वर्णन है और दूसरे में यशोदा और गोपी संवाद के रूप में कृष्ण की माखन चोरी आदि की शिकायत है।

पद का प्रारम्भ कडवा और त्रोटक से हुआ है और अन्त में सवाईयो दिया हुआ है। कुछ अंश दृष्टव्य है-

''कडवा - सुनो मेरे सैयाँ यादव रैया, गोकुल रहीये लागूँ पैयाँ।
त्रोटक- लागीये पैया हरि न जै है, बात यह मन जाणी है।
उन क्रुर के अक्रुर का विश्वास कछु न आणी है।
सवाईयो- गोकुल सकल विकल... कंसासुर मार''।[30]

ये किसी भक्ति सम्प्रदाय से प्रभावित या दीक्षित नहीं थे। इनके पिता का नाम हृदय राम और माता का नाम तारादेवी तथा जाति के कायस्थ थे।ये प्रभास पाटण के निवासी थे। इनके जन्म के समय का कहीं उल्लेख नहीं मिलता। डॉ0 मदनकुमार जानी ने इन्हें 16वीं शताब्दी का कवि माना है।[31]

लक्ष्मीदास (सन् 583-1619 ई0)

श्री मद्भागवत के दशम स्कंध की कथा का मातृभाषा में पद्यात्मक रूपान्तर तथा

महाभारत आदि की विभिन्न कथाओं के आधार पर स्वतन्त्र प्रबन्धात्मक एवं पद-प्रधान कृतियों की रचना करने वाले कवियों में सम्प्रदायनिरपेक्ष कवि लक्ष्मीदास (1583-1619) उल्लेखनीय हैं। महमदाबाद निवासी इस कवि ने गुजराती के साथ ब्रज भाषा में भी कुछ पद-रचना की है। डॉ0 जगदीश गुप्त के अनुसार ''लक्ष्मीदास रचित कतिपय छोटे-छोटे ब्रज भाषा के पदों की भी सूचना मिलती है। कुछ पदों की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है और कुछ में गुजराती का मिश्रण हुआ है।''[32] प्रस्तुत पद टेक प्रधान है तथा लय और ताल का सहज निर्वाह हुआ है। यथा-

''आजु मेरे सफल भये नेन।
कोटि मन्मथ रूप चतुरजु निरखे गिरिधर चेन।
कोटि रवि छवि जोति आनन अंबर कोटिक मेन
जन लखिमिदास विचित्र वरूनी लिखी चित्र से ऐन।''[33]

लक्ष्मीदास के पद केदारा, रामगरा, कानरा आदि विभिन्न रागों में निबद्ध हैं। कवि ने पदों के अतिरिक्त 'सवाईयाँ' भी लिखे हैं।

'दौ सौ बावन वैष्णव की वार्ता' में 16वीं शती के गुजरात के वैष्णव भक्त कवियों में ***जनभगवान, रामदास, हरिजीवन*** का उल्लेख तथा उनके पद मिलते हैं।[34]

श्री डाह्माभाई देरासरी ने जूनागढ़ निवासी ***नरमिया*** (संवत् 1590), वैष्णव कवि ***गिरधर लाल नागर, धोंन*** कवि का उल्लेख किया है।[35]

ब्रेहदेव (सन् 1553 में विधमान)

महीदास सुत ब्रेहदेव ने भागवत के दशम स्कंध के अध्याय 46 और 47 के आधा - र पर ***'भ्रमरगीता'*** की सन् 1553 में रचना की है। इसमें विभिन्न रागों में कडवा छंद में पदों की रचना की है। कवि ने विरहिणी नायिका की कृष्ण के प्रति अनन्य प्रीति का वर्णन किया है।

ईसर बारोट (16वीं शती में विद्यमान)

ईसरदास रोहडीआ ने सौराष्ट्र के लीबंडी व जामनगर को कार्यक्षेत्र बनाते हुए ***'हरि रस'*** नामक कृष्ण-भक्ति प्रधान प्रबन्धकाव्य की रचना 16वीं शती में की। इनके गुरु पंडित पीताम्बर भट्ट थे। ये जामनगर (नवानगर) में राजवी जाम रावल की राजसभा के कवि थे। कविता की दृष्टि से ये द्वितीय श्रेणी के थे। इनकी आरती-रचना का उदाहरण दृष्टव्य है-

''कन्ह आरती कन्ह आरती-मैढ हुवै नैयर द्वारामती।

o o o

रणछोड कलाणा रमाडिये । ईसरा ईम पाप उडाडिये।।''[36]

साँया झूला (1576-161 ई0)

कुवावा वासी 'सायाँ झूला' ईडर की राजसभा के कवि थे जिन्होंने वीररसपूर्ण ***'रूक्मिणीहरण'*** एवं भक्ति एवं वात्सल्य रस प्रधान ***'नाग दमण'*** काव्यों की रचना की। नाग दमण में गोचारण, कालियानागदमण आदि ***लोक मंगलकारी*** लीलाओं का वर्णन है।

सायाँ झुला के 'नागदमन' के चारणी-डिंगल भाषा-शैली का एक उदाहरण देखिए-

''कंठा हूत आयो, अठे काज केहा,
गृहा भूलियो बापरा साप गेहा।
कही कोर चंपे, रही आव कावे,
असो बाल देखी, दया मोर आवे।''[37]

समर्थदास (सं0 1550-1620 वि0)

'सांई सम्रथ' के नाम से विख्यात संत समर्थदास का जन्म वि0 संवत् 1550 में सिद्धपुर में और निर्वाण संवत् 1620 वि0 में सूरत में हुआ था। संत समर्थदास ने झूलना छंद में वैराग्य, ज्ञान, भक्ति तथा उपदेश विषयक अनेक पदों की सधुक्कड़ी भाषा में रचना की है।

दादू दयाल (सं0 1601-1660 वि0)

दादू दयाल का जन्म आचार्य क्षितिमोहन सेन[38], दादूपंथी तथा अन्य विद्वान[39] गुजरात के अहमदाबाद में संवत् 1601 का मानते हैं।[40] पंडित सुधाकर द्विवेदी के अनुसार दादू का जन्म काशी के पास जौनपुर में हुआ था।[41] दादू के समकालीन संत अखा ने 'संतप्रिया' में इनको 'दादू धुनिया' बताया है-

''चमार जुलाहा नाई धुनिया दादु रैदास सेना कविराई''

-संतप्रिया[42], पृ0 21

इनकी मृत्यु नरेणा में ज्येष्ठ वदी अष्टमी सं0 1660 को हुई। ये जयपुर के राजा मानसिंह के पिता राजा भगवानदास और अकबर के समकालीन थे। दादू के गुरु बुड्ढन (वृद्धानन्द)[43] या कमाल[44] थे। इन्होंने ग्यारह वर्ष की अल्पायु में दीक्षा ली थी। यद्यपि वे विवाहित थे और संत कबीर की तरह अपने पूर्वजों के पेशे से जीविका चलाते हुए गृहस्थी जीवन के साथ-साथ उनका जीवन परमात्मा की गहरी भक्ति में लगा हुआ था।

उनका अधिकांश जीवन भ्रमण, सत्संग, चिन्तन-मनन में बीता। उन्होंने 'परब्रह्म-सम्प्रदाय' नामक सम्प्रदाय की स्थापना की जो बाद में दादू-पंथ के नाम से प्रचलित हुआ। दादू ने निरंजन, निराकार ब्रह्म की सत्ता स्वीकार करते हुए माला, तिलक, मूर्तिपूजा, आदि बाह्याचारों का

विरोध किया। इनके अनुयायी विपुल संख्या में थे। 1586 ई0 में चालीस दिनों तक अकबर ने दादू के साथ धर्म के विषय पर बातचीत की।[45] इनके 152 शिष्यों में बखना, रज्जबदास, जगजीवन दास, सुन्दरदास, मोहन आदि शिष्य[46] प्रमुख थे।

दादू निर्गुण काव्यधारा के प्रसिद्ध गुजराती संत हुए हैं। माना जाता है कि इन्होंने 20,000 के करीब रचनाएँ लिखी परन्तु इनमें से अधिकांश नष्ट या विलुप्त हो चुकी हैं। इन्हें पंजाबी, गुजराती, राजस्थानी भाषा का पर्याप्त ज्ञान था। इनका प्रभाव इनके द्वारा रचित सधुक्कड़ी हिन्दी के पदों पर स्पष्ट दिखाई देता है।

डॉ0 नागर के अनुसार, इनके 445 सबद और 2,658 साखियाँ मिलती हैं। दादू के दो शिष्यों ने इनकी बहुत-सी बानियों का संग्रह किया था। इनकी साखियों में इन्होंने गुरु महिमा, नामस्मरण, प्रेम, विरह और ब्रह्म की महत्ता के साथ-साथ कर्मकाण्डों का खण्डन भी किया है।

कर्म काण्ड का खण्डन-

''(दादू) हिन्दू लागे देहुरै, मूसलमान मसीति।
हम लागे इक अलेष सौं, सदा निरन्तर प्रीति ॥''[47]

ईश्वर भक्ति का उपदेश-

''मन रे राम बिना तन छीजइ।
जब यह जाइ मिलइ माटी में तब कहु कइसहि कीजइ।
पारस परस कँचन करि लीजइ सहज सुख दाई ॥''[48]

16वीं शताब्दी के अन्य ज्ञानी भक्त कवियों ने प्रेमाबाई, अन्नपूर्णा, लोचन स्वामी, तेजानन्द स्वामी आदि का उल्लेख मिलता है।

प्रेमाबाई (ई0स0 1544-1556 तक)का जन्म पाटण के शेवमल परमार के घर हुआ। इनके गुरु समर्थदास जी के शिष्य माधवदास थे। इन्होंने गुरु भक्ति और ईश्वर भक्ति के पदों, साखियैँ की हिन्दी और गुजराती भाषा में रचना की है। इनकी 3 अप्रकाशित साखियाँ उपलब्ध है।[49]

अन्नपूर्णा (ई0स0 1547 से 1569 तक) द्वारा ब्रजभाषा मिश्रित गुजराती में लिखे पद, भजन और साखियाँ मिलती हैं। भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और उपदेश के पदों की रचना सरल भाषा में की है।

तेजानन्द स्वामी (ई0स0 1536-1624 तक) के तेजस्वी प्रभाव से मुगल सम्राट अकबर के वजीर टोडरमल सूरत में राज-काज संभालने गए इनके अनुयायी बन गए। इनके

आश्रम में विभिन्न संत रहकर उपदेश सुनते और समाज के लिए कल्याणकारी कार्य करते। इनकी 37 साखियाँ हिन्दी में प्रकाशित हैं।[50]

लोचनस्वामी (ई0स0 1560 में समाधिस्थ) का जन्म भृगुपर भड़ौच में हुआ। युवावस्था में वैराग्य जागने पर कबीर तथा पद्मनाभ जी से उपदेश ग्रहण किया। इनके शिष्यों में समर्थदास, हुराबाई, पंजुदास, अकलदास, नथ्थुदास, नेजादास, तेजदास, महिपाल और दुलारी गायिका हैं। इनके द्वारा रचित पद, भजन, साखियाँ भागवत भाव से परिपूर्ण हैं। इनकी 6 साखियाँ उपलब्ध हैं जो हिन्दी में हैं और अप्रकाशित हैं।[51]

17वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

मध्यकालीन साहित्य की दृष्टि से 17वीं शताब्दी अधिक सफल और सम्पन्न है। इस शताब्दी में अखा, आनन्दघन, प्राणनाथ जैसे कवि हुए। इस समय गुजरात में मुगल-शासन था। शांति और सम्पन्नता के कारण प्रथम कोटि के साहित्य की रचना हुई। अखा, आनन्दघन जैसे कवियों की ज्ञान और भक्ति की रचनाएँ मिलती हैं। ज्ञानमार्गी कवियों में अखो सर्वोत्तम हैं। जैन कवियों के साथ-साथ अन्य भक्त कवियों ने भी साहित्य-समृद्धि में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

राजे (गुजरात का रसखान)

गुजरात के मध्यकालीन कृष्ण भक्त कवि राजे (1650-1730 ई0) को गुजरात का रसखान भी कहा जाता है। राजे मोलेसलाम परिवार में जन्में थे। इनके पिता का नाम रणछोड़ हैं।[52]

राजे ने भी गोपी भाव से पूर्ण हिन्दी और गुजराती में अनेक पदों और साखियों की भावभीनी रचना की है। यथा-

''गगन गरजे मेहवा, बोले पपीहा मोर रे।
बिरहिनी दुख भोगती, आय न कंथ कठोर रे ॥''[53]

राजे की साखियों की संख्या 3778 तथा 6000 के आस-पास पद हैं।

राजे ने अपनी मुक्तकात्मक एवं प्रबन्धात्मक कृतियों की रचना पद, सवैया, बारहमासी, प्रबोध, बावनी और साखी आदि में की है।

राजे को ***'गुजरात का रसखान'*** कहा गया है। निम्नलिखित साखी हमें रसखान की स्मृति दिलाती है-

''धन ए गोकुल गाए कू सांम चरावे नीत।
जे राजे बैकुंठ नहीं तैं छत देखू ईत॥1॥

जे ईत हे ते ऊत नही ऊत हे ते ईत आज
धनं राजे ते भोम कूं जांहां पांऊ धरे माहाराज ॥2॥
धनं व्रन्दावन वेलडी नीत ऊठ नरखे नाथ
धन। ए ब्रीज की गोपीका जे नीत राजे हरी साथ ॥3॥[54]

कायस्थ भगवानदास

सूरत निवासी कायस्थ भगवानदास (1626-1690 ई0) पुष्टिमार्गीय भक्तों की परम्परा में आते हैं जिन्होंने कृष्ण भक्ति-भावना से आपूरित गुजराती के साथ-साथ ब्रज भाषा में पद लिखे हैं। वे संस्कृत, फारसी, अरबी, मराठी और हिन्दी के अच्छे ज्ञानी थे।

आरती प्रधान पद में इन्द्रकोप के कारण भयंकर वर्षा प्रकोप, गोवर्धन शरण, द्रौपदी चीरहरण, लाक्षागृह में पांडव रक्षा आदि अन्तर्कथाओं का भी सुष्ठु प्रयोग किया है। इन्होंने श्री कृष्ण के संकट निवारक रूप का वर्णन किया है -

"अब मोको रख लिओ गोपाला
जैसे सुरपित कोप आगे राखे सब ब्रीज बाल

o o o

अब दास भगवान शरण आयो, राख गिरिधारी लाला ॥"[55]

श्री डाह्याभाई पीताम्बर दास देरासरी ने अपनी पुस्तक में सत्रहवीं शताब्दी के कवियों में ***पुहकर*** (ब्रजभाषा में रचित 'रस रतन'), वडनगरा नागर ब्राह्मण वामनदेव के पुत्र ***शिवानन्द*** (सन 1644 ई0), 'गीतगोविन्दादर्श' और 'लीलावती' के रचयिता ***रामचन्द्र नागर*** और कविश्वर ***देवरामजी*** का उल्लेख किया है।[56]

मध्यकाल की सूफी कवियों में सत्रहवीं शताब्दी के ***शेख मोहम्मद अमीन, वली*** का नाम उल्लेखनीय है।

मुकुन्द (रचनाकाल सं0 1708 विक्रम)

द्वारिका के औदिच्य ग्रुगली ब्राह्मण मुकुन्द ने 'भक्त माल' (संम्वत् 1708 में रचना) की रचना की है। इसमें से केवल ***'कबीर-चरित'*** और ***'गोरक्षचरित'*** उपलब्ध होता है। 'गोरक्षचरित' व तथा 'कबीरचरित' 15 कडवों में है। साहित्यिक दृष्टि से 'कबीर-चरित' का विशेष महत्त्व है। इनके कुछ हिन्दी पद भी मिलते हैं।

मुकुन्द के जन्मादि के बारे में विशेष जानकारी नहीं है। इनके काव्यों में ज्ञान और योग की प्रधानता रही है।

प्रणामी अथवा धामी-पंथ के प्रवर्तक सर्वधर्म समन्वयी संत ***प्राणनाथ*** (1618-1675

ई0) ने मिली जुली भाषा में 14 ग्रंथों की रचना की है जिसमें ***'कुलजम स्वरूप'*** (कुलजम-ए-शरीफ) विशेष प्रसिद्ध है।

संत प्राणनाथ का विस्तृत उल्लेख अध्याय 3 में किया गया है।

अखा (सन् 1592-1669 ई0)

गुजरात के स्वतन्त्र ज्ञानी कवियों में अखा का मूर्धन्य स्थान है। इनका जन्म जेतलपुर में हुआ और सुनार जाति के थे। गृह त्याग कर सच्चे गुरु की खोज करते गोकुल गए और वहाँ वल्लभाचार्य के पौत्र गोकुलनाथ जी से कंठी बंधवाकर पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए किन्तु कुछ समय बाद ज्ञान मार्ग की ओर उन्मुख हो गए।

डॉ0 नागर एवं डॉ0 पाठक के मत से -***''अखा की कविता ज्ञान, वैराग्य और भक्ति का त्रिवेणी संगम है।''***[57] भाषा-शैली के विषय में इनका मत है -''अखा भाषा शैली की सरलता के पक्षपाती थे। प्रांजलता का अभाव होते हुए भी इनकी वाणी बड़ी ही सचोट, सारगर्भित एवं हृदयस्पर्शी है। इनकी भाषा संत टकसाल की हिन्दी है,...। इन्होंने संस्कृत एवं अरबी-फारसी के तत्सम शब्दों के साथ-साथ तद्भव एवं देशज शब्दों का प्रयोग कर उन्हें तोड़ा-मरोड़ा भी है। छंदों की मात्राओं की घट-बढ़ और पदों में लय का अभाव है। इतना होने पर भी अखा की वाणी का महत्त्व है और आगे भी अक्षुण्ण रहेगा।''[58]

इनकी ग्यारह हिन्दी रचनाओं के नाम डॉ0 रामकुमार गुप्त एवं डॉ0 नागर ने गिनाएँ हैं। इनकी रचनाएँ हैं[59] - ***1) संतप्रिया, 2) ब्रह्मलीला, 3) जकड़ी, 4) झूलणा, 5) धमार, 6) कुंडलिया, 7) एक लक्ष रमणी, 8) भजन, 9) विभिन्न अंगों में विभाजित 1700 के लगभग साखियाँ, 10) अमृतकला रमेणी तथा 11) पद ।***

स्वभाषा गुजराती में रचना करने के साथ-साथ अखा ने हिन्दी भाषा में भी पदों, सवैयों तथा विपुल परिमाण में साखियों की रचना की है।[60] इनकी रचना-शैली की उदाहरण देखिए-

''अकल कला खेलत नर ज्ञानी,
जैसे हि नाब हिरे फिरे दसों दिश,
ध्रुव तारे पर रहत निशानी ॥''[61]

संतप्रिया :

'संतप्रिया' के दो प्रकरण है जिसमें 136 छन्दों में कवित्त, सवैया तथा दोहों में काव्य-रचना की है। इसमें बाह्याचारों और रूढ़ियों का विरोध करते हुए मनुष्य को परबह्म को पहचानने का उपदेश दिया है।

कवि के मतानुसार गुरु ही गोविंद है और गोविंद ही ब्रह्मज्ञान है -

''गुरु गोविंद गोविंद सोई गुरु गुरु गोविंद गनत नहीं न्यारा।
वैकुंठ ते सुकदेव गुरु बिन आय फिरी भू भाषे सोनारा ॥''(62)

ब्रह्मलीला :

'ब्रह्मलीला' 48 छन्दों की एक महत्त्वपूर्ण लघु रचना है। इसमें आदि निरंजन स्वरूप परब्रह्म के रहस्य का निरूपण किया है। स्वयं अखा ने इस कृति की प्रशंसा में कहा है -

''कहे अखा यह ब्रह्मलीला,बड़भागी जन गायेगो।
हरि हीरा अपने हृदय में अनायास सों पायगो ॥''(63)

अखा ने 100 के करीब हिन्दी पदों की रचना की है। कबीर के 'संतो भाई, आई ग्यान की आंधी' पद की स्मृति दिलाने वाले निम्नलिखित पद में अखा की आत्म साक्षात्कारजनित आनंद की अभिव्यक्ति के साथ-साथ सर्जनशक्ति का स्पष्ट बोध होता है। यथा -

''ज्ञान घटा चढ़ आई अचानक ज्ञान घटा चढ़ आई।
अनुभव जल बरखा बड़ी बुंदन, कर्म की कीन रेलाई ॥

o o o

गयो ग्रीष्म अंकुर उगि आये, हरिहर की हरियाई।
शुक सनकादिक शेष सहराये, सोई 'अखा' पद पाई ॥''(64)

कबीर 109 झूलना छन्दों में रचित सूफीशाही इबारत का परिचय कराने वाली महत्त्वपूर्ण रचना 'झूलना' है जिसमें पंजाबी, फारसी, अरबी और गुजराती मिश्रित भाषा-शैली का परिचय दिया है।

भेष बदल-बदल कर अनेक छल छन्दों के खेल करने वाले इस किरतार को पकड़कर बाँधे रखने में अखा को जो उत्कट उल्लास होता है उसका संकेत निम्नलिखित पंक्तियों में मिलता है -

''आब, आतश, खाक, वायु तु ही भेश फेर कर तुं ही आया।
छंदडे कर कर छुप जाता था अब अखा न जाये ब्राह्या ॥46॥''(65)

अखा ने दो हजार के करीब साखियाँ लिखी हैं जो माया, गुरुकृपा, प्रेम प्रीछ, चेतना, ज्ञानी, भक्ति, आत्म ज्ञान, अनभे आदि विभिन्न अंगों में विभक्त हैं। इनकी साखियों में भाषा की प्रौढ़ता, प्रांजलता, समासशक्ति का बोध होता है।

एक उदाहरण देखिए -

"'अखा' दुनियां को कहा कहे, जो फेर बहु लक्ष मांह्य;
ज्यूं अधोगति नीर की, तेज उर्ध्व गति जाय ॥19॥"[65]

(सहेज शक्ति अंग)

अखा की एक अन्य महत्त्वपूर्ण रचना 'जकड़ी' है। अब तक 39 जकड़ियाँ मिली हैं। पचरंगी चोला पहन कर अपने सांइयां के साथ खेलने को अखा की आत्मा तड़पती है-

"हुं सांइयां तुज साथे रे तुं ही मेरी आथे रे;
तें खेल बनाया हाथे रे पंचरंगी मेरा चोला रे"॥13॥[66]

अखा के समकालीन शासक जहाँगीर थे।[67] इनके प्रमुख शिष्यों में लालदास, हरिकृष्ण महाराज, जीतामुनिनारायण, कल्याणदास विशेष उल्लेखनीय हैं।[68]

17वीं शताब्दी के अन्य कवियों में मेकन दादा, गोपालदास, मुकुन्ददास, कृष्णदास, चन्द्रावती, अनीसा रोशन, चेतन स्वामी आदि उल्लेखनीय हैं।

श्री दूलेराय काराणी ने ***मेकन दादा*** को 'कच्छ का कबीर' कहा है। समाज सुधारक मेकन दादा ने संवत् 1786 को जीवित समाधि ली। इनकी हिन्दी रचनाएँ बहुत कम है जिनमें कच्छी, सिन्धी, गुजराती और हिन्दी का अपूर्व मिश्रण है।

अखा के समकालीन अडालजा वैश्य ***गोपालदास*** का जन्म नांदोद में हुआ। उन्होंने 'ज्ञान प्रकाश' और 'गोपालगीता' की रचना की।[69] गुजराती मिश्रित हिन्दी भाषा में इन्होंने रासलीला, कृष्ण भक्ति एवं सत्संग-महिमा के सरल पदों की रचना की है।

प्रणामी सम्प्रदाय के मुकुन्ददास ने 'नवरंग स्वामी' के नाम से रचनाऐं लिखी हैं। इनके विशाल ग्रंथ 'नवरंग सागर' में 3600 चौपाइयाँ हैं।

कबीरपंथी ***कृष्णदास*** अष्टछाप के कृष्णदास के भिन्न है। इनका उपस्थिति काल सं018वीं शती का मध्यकाल था। इनके हिन्दी में तीन ग्रंथ -1) 'ज्ञान-प्रकाश', 2) 'यदुनंदन' और 3) 'रघुवंशमणि' हैं

चन्द्रावती (ई0 सन् 1624 के आसपास) के गुरु माधवदास थे। इनके द्वारा गुरु महिमा, ज्ञान, भक्ति, वैराग्य-भावना से ओतप्रोत 60 साखियाँ मिलती हैं। इनकी भाषा सरल गुजराती मिश्रित हिन्दी है। कहीं-कहीं शुद्ध ब्रजभाषा का प्रयोग भी मिलता है।[70]

अनिसा रोशन (ई0स0 1642-1700 तक) के पिता सूरत में सूबेदार थे। इनके द्वारा लिखित 10 प्रकीर्ण साखियाँ ब्रजभाषा में उपलब्ध हैं।[71]

चेतन स्वामी (ई0स0 1664 के आसपास का समय) ने गुरु आज्ञा से गुजरात

में धर्म का प्रचार करते थे। इन्होंने सरल भाषा में पद, भजन, कुंडलियाँ तथा साखियाँ की रचना की है।[72]

18वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

18वीं शताब्दी में निर्गुण एवं सगुण भक्ति की धाराएँ समान रूप से साथ-साथ बह रही थीं। इस शताब्दी में रविभाण सम्प्रदाय, स्वामी नारायण सम्प्रदाय के कवियों द्वारा काव्य-रचना होने के साथ-साथ सम्प्रदाय निरपेक्ष कवियों द्वारा सगुण और निर्गुण काव्य-साहित्य सृजन होता रहा। गुजरात के राजा-महाराजाओं के द्वारा काव्य-साहित्य का निर्माण भी हुआ। कवि बनाने के लिए कच्छ की ब्रजभाषा पाठशाला की भी इसी सदी में स्थापना हुई। सगुण और निर्गुण भक्तिपरक साहित्य के साथ-साथ रीतिपरक काव्य का प्रणयन भी हुआ। इस शताब्दी में प्रबन्ध काव्यों के साथ मुक्तक-काव्यों की रचना भी हुई।

लालदास (सं01710-1800 वि0)

अखा प्रणालिका के प्रथम संत लालदास गुजरात के बालाशिनोर के वीरपुर गाँव में जन्मे थे। इनकी रचनाओं में पद तथा साखियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनकी पदावली सरल एवं मार्मिक है।

अनुभवानंद

अनुभवानंद का मूल नाम 'नाथ भवान' था। इनका समय सं0 1737 से 1856 तक निश्चित किया जाता है।[73] ये सौराष्ट्र के वडनगरा ब्राह्मण थे। कई ग्रंथों ***'शिवगीता', 'ब्रह्मगीता', 'भागवतसार(कृष्ण)', 'चिद्शक्ति विलास', 'ब्रह्म-विलास'*** आदि के साथ इनके कुछ हिन्दी पद भी मिलते हैं।

इनकी भाषा ब्रजभाषा के निकट है फिर भी गुजराती, अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग है। शैली संगीतात्मक, आलंकारिक और प्रभावी है।

मूलदास (सं0 1731)

मूलदास का जन्म सं0 1731 और मृत्यु सं0 1831 वि0 को हुई। सौराष्ट्र के आमोदरा गाँव के मूलदास की माता गंगाबाई और पिता कृष्ण जी थे। इनकी रचनाओं में ***'भगवद्गीता', 'गुरुगीता', 'नारदगीता', 'ब्रह्मगीता'*** आदि के मार्मिक पद्यानुवाद, ***'चौबीस गुरु दत्तलीला ग्रंथ'*** तथा ***फुटकल पद*** हैं। इनकी भाषा पर गुजराती प्रभाव है। अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। ओजपूर्ण वाणी के पदों में संगीतात्मकता भी है।

18वीं शताब्दी के अन्य कवियों में डॉ0 रामकुमार गुप्त द्वारा 18वीं शताब्दी के कुछ संत कवियों - ***भक्त खोजीराम, दास, मूलजीभगत, खुमानबाई, भादूदास, बालक दास,***

राधोभगत, कल्याण दास, जगजीवन, आदि का उल्लेख अपने ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के सन्तकवियों की देन' में किया है।[74]

18वीं शताब्दी के रविभाण-सम्प्रदाय के भाण साहब, खीम साहब, रवि साहब, त्रीकम साहब, जीवण साहब आदि संतों के नाम उल्लेखनीय हैं। इनका विस्तृत उल्लेख अध्याय-3 के अन्तर्गत किया गया है।

स्वामी नारायण सम्प्रदाय के मूल संस्थापक आत्मानंद कहे जाते हैं, जो शांकर सिद्धान्त को मानने वाले थे। किन्तु उनके बाद रामानन्द और शिष्य सहजानन्द ने रामानुज के श्री सम्प्रदाय का सिद्धान्त स्वीकार कर लिए।[75]

रामानन्द स्वामी द्वारा सहजानन्द स्वामी (सन् 1719-1820 ई0) के उद्धव सम्प्रदाय दीक्षा देने के बाद स्वामी नारायण सम्प्रदाय की स्थापना हुई। 18वीं शताब्दी में इस सम्प्रदाय के अनेक कवियों में हिन्दी में काव्य-सृजन करने वाले प्रमुख कवि मुक्तानन्द, ब्रह्मानंद, प्रेमानन्द, निष्कुलानन्द हैं। इनका कवियों का रचना-काल 19वीं शताब्दी के पूवार्द्ध तक चला गया है।

स्वामी नारायण सम्प्रदाय के कवियों एवं उनके प्रदान का विस्तृत उल्लेख 'विभिन्न धर्म सम्प्रदायों की देन' नामक शीर्षक के अन्तर्गत किया गया है।

वस्तो विश्वंभर (उपस्थिति काल सं01831 वि0)

इनका मूल नाम वस्ताराम था। रामानन्द सम्प्रदाय के विश्वंभरदास जी से दीक्षा लेने के उपरांत, गुरु का नाम जोड़कर अपने को वस्ताविश्वंभर कहना शुरू किया। ये खंभात के निकट सकरपुर गाँव के थे। इन्होंने कुल विभिन्न अंगों में विभक्त 2643 के करीब साखियाँ और 300 के करीब हिन्दी पद लिखे हैं।

वस्ता की हिन्दी-रचनाएँ हैं- 1) ***'साखी ग्रंथ'***, 2) ***'गुरुगीता'***, 3) ***'मंगल काव्य'***, 4) ***'धोल'***, 5) ***फुटकल पद।***

इनकी रचना से एक उदाहरण देखिए -

> ***"पूरण-पूरण के प्रेम से, पूरण-पूरण की छोल,***
> ***वस्ता विश्वम्भर स्वयं भरा, एक की झकमझोल।"***[76]

निरांत (1747-1843 ई0) गुजरात के प्रमुख ज्ञानमार्गी कवियों में से एक हैं। इन्होंने झूलणा, कविता, कुंडलियों, रेखता, साखी आदि छन्दों में अनेक पदों की रचना की है। संगीत-प्रेमी होने के कारण विभिन्न राग-रागिनियों में इनकी रचनाएँ उपलब्ध हैं। भाषा की दृष्टि से इनकी हिन्दी-रचनाएँ बहुत साधारण हैं। ये रचनाएँ '***प्राचीन काव्यमाला-भाग 10***' में संग्रहीत हैं। इसमें निरांत ने केदार राग को सभी रागों का देवता कहा है -

''केदारो जब कीजिए, मुखमें जापिये राम,

सब रागन को देव है, केदारो महाधाम।''[77]

अवतारवाद का खण्डन करने वाले वस्तुतः ये नाम-महिमा के गायक ब्रह्म ज्ञानी कवि थे-

''नाम निरंजन से अधिक नाम एक निज नाम।

सब घट में व्यापी रहे, नाम निरंजन ठाम ॥(10)''[78]

इन्होंने अपने 16 शिष्यों को चुनकर निरांत सम्प्रदाय की स्थापना की। इनके प्रमुख शिष्यों में बापू साहब गायकबाड़ ने बड़ौदा तथा गोविन्दराम ने सूरत में गद्दी स्थापित की।

गोविन्दराम के 4 शिष्य थे- रामदास, गणपतराम, रणछोड़दास, बांसजीभाई।

त्रिविक्रमानंद (सं0 1816-1876 वि0) जम्बूसर के औदिच्य ब्राह्मण थे। इनके द्वारा रचित अनेक हिन्दी-गुजराती ग्रंथों का उल्लेख मिलता है। लेकिन फुटकल पद ही मिल पाए है। इन्होंने ब्रज, उर्दू, संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, दकनी आदि विभिन्न भाषाओं में पद सवैये, रेखता, कवित्त आदि लिखे हैं। अपनी रचनाओं में इन्होंने ज्ञान, भक्ति, सदाचार, योग आदि पर बल दिया है।

धीरो (1753-1825 ई0) बड़ौदा के सावली के निकट गोठडा नामक गाँव के निवासी थे। प्रारंभ में कृष्ण भक्ति की कविता करते थे पर आगे चलकर ज्ञान-भक्ति की कविता करने लगे। हिन्दी में इन्होंने पद, कुंडलियाँ लिखी हैं। कुछ पंक्तियाँ देखिए-

''दम का भरोसा मत कर भाई, साधन करंदा सांई।

साधन करंदा सांई, मैं वारि वर्या दम का ॥''[79]

धीरा का कोई स्वतन्त्र हिन्दी ग्रंथ नहीं मिलता। अनुमान के अनुसार उनके हिन्दी गुजराती पदों की संख्या 25000 के लगभग है।[80] प्राचीन काव्य माला, भाग 23, 24, 25 में धीराकृत रचनाओं का उल्लेख मिलता है।

प्रीतम (1718-1798 ई0)

जिस प्रकार राजे को 'गुजरात का रसखान' कहा गया है उसी प्रकार प्रीतमदास को 'गुजरात का सूरदास'। प्रीतम पर शोधकार्य करने वाले डॉ0 अश्विनभाई पटेल ने 'पश्यंति कवि' प्रीतम को 'गुजरात का सूरदास' कहा है। प्रीतम गुजरात के खेड़ा जिले के बावला गाँव के भाट थे। इन्होंने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी काव्यरचना की है। डॉ0 रामकुमार गुप्त ने इन्हें रामानंदी सम्प्रदाय के सन्त कवि के रूप में माना है और ये रवि साहब के समकालीन थे।[81]

प्रीतम द्वारा रचित हिन्दी रचनाएँ इस प्रकार हैं - 1) 'गुरुमहिमा' भाग-2[82], 2) 'भक्त नामावली'[83], 3) 'ज्ञान प्रकाश' का पहला पद[84], 4) 'ब्रह्मलीला'[85], 5) 'साखी-ग्रन्थ'[86], 6) 'विनय-स्तुति' की अन्तिम चौपाईयाँ[87], 7) 'विनय-दीनता'[88], 8) 'फुटकल-पद', 9) 'सप्तश्लोकी गीता[89]। 'साखी-ग्रंथ' में इन्होंने 24 अंगों में विभक्त सधुक्कड़ी भाषा में अत्यन्त भावपूर्ण और बोधप्रद साखियाँ लिखी हैं। इनकी साखियों के कुछ नमूने देखिए-

''छिन छिन आछा होत है, अंजलि केरा नीर।
कहे प्रीतम कैसे रहे, नव छिद्र युक्त शरीर।।
तृष्णा तू थाकी नहीं, खायो सब संसार।
कहे प्रतीम करूँ दूर थी, कर जोड़ी नमस्कार ॥[90]

प्रीतम दास की पंक्तियाँ रचित कृष्ण बाल लीला का एक पद उदाहरणार्थ प्रस्तुत है--

''श्री जमुना त्रुट रची ग्वाल मंडली, कीयो एकहो भात,
खात सरात जात नंदनंदन, मंदमंद मुसकात। अहोलाल0'[91]

कृष्ण-राधा एवं कृष्ण-गोपी प्रेम का वर्णन कवि ने बड़े उल्लास से किया है जो भावोत्कटता एवं अभिव्यंजना शैली के वैशिष्ट्य का परिचायक है।

ज्ञान, भक्ति और वैराग्य के पदों के साथ-साथ प्रीतम ने कृष्ण भक्ति, प्रेमलक्षणा भक्ति सम्बन्धी पद, जिनमें विविध अवतारों से सम्बन्धित बधाइयों की रचना की है।

गिरधर (1787-1852)

गिरधर का जन्म बड़ौदा जिले के मातर गाँव में हुआ। ये जाति से वैश्य थे। अल्पायु में अनाथ हो गए। गिरधर का वैवाहिक जीवन सुखी नहीं होने से संसार से विरक्त हो हरि भजन में मस्त रहते।

प्रेमानन्द और दयाराम जैसे कृष्ण भक्तों की रचनाओं से प्रेरित हो गुजराती एवं हिन्दी में अनेक रचनाएँ की हैं।

हिन्दी भाषा में गिरधर रचित कृष्ण भक्ति-काव्य में ***'दाण लीला'*** (1818 ई0), ***'श्रीकृष्ण जन्म वर्णन', 'श्रीकृष्ण चरित'*** (मुद्रित), ***'राधाकृष्ण रास', 'ग्रीष्म ऋतु लीला', 'कीर्तन'*** एवं 50 के आसपास शुद्ध ब्रज भाषा में रचित अप्रकाशित साखियाँ हैं जिनमें राधा-कृष्ण विषयक विभिन्न लीलाओं के वर्णन के साथ-साथ उपदेश भी दिए हैं। 'राधा-कृष्ण रास' का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

''ब्रजलाल संघ गोपाल बानि अति ख्याल करत मनभावत लीला।
अनुरूप अति तेजभूप दंपति सुखसागर नागर अति उजागर
वयरागर सागर गुण सागर।...''[92]

यह प्रबन्ध गुजराती में है। गिरधर हिन्दी में रचित रचनाओं की अपेक्षा गुजराती में रचित रचनाओं के कारण अधिक प्रख्यात हैं।

हरख जी मेहता का जन्म 1764 ई0 में भावनगर के सिहोर गाँव में हुआ था। भावनगर के ठाकुर तखत सिंह के कारोबारी और पुष्टिमार्ग के आचार्य माघवराय जी कोटवाला के शिष्य थे। संगीतज्ञ एवं लेखन में रुचि होने से इनके अधिकांश पद राग-रागिनियों एवं तालों में निबद्ध हैं। इन्होंने गुजरात के अन्य कवियों की भाँति भ्रमरगीत विषयक रचनाएँ और कृष्ण की बाल लीला-पदों की रचना की है।

कच्छ के हमला गाँव के ***देवा जी***[93] साहेब परम्परा के संत होते हुए भी कृष्ण के परम भक्त थे। इन्होंने ज्ञान-विराग प्रधान पदों के साथ द्वारकाधीश की भक्तिभाव से भरे ***'कृष्ण सागर-कर्म काण्ड'*** नामक प्रबन्धात्मक रचना की है। इसके अतिरिक्त ***'रामसागर-ज्ञान काण्ड', 'हरिसागर-उपासना काण्ड'*** में इनकी वाणी का संकलन है। इन ग्रंथों के अतिरिक्त पद, साखी, कुंडलियाँ आदि की रचना भी की है। देवा साहब जी द्वारा रचित लगभग 415 ब्रजभाषा की साखियाँ उपलब्ध हुई हैं जो प्रकाशित हैं।

त्रिकमदास (1734-1794 ई0)

जूनागढ़ निवासी त्रिकमदास नरसिंह महेता के चाचा पर्वतराय के वंशज थे। इन्होंने ***'डाकोर लीला'*** और ***'रुक्मिणीहरण'*** नामक प्रबन्ध काव्य तथा 140 से अधिक स्फुट पदों की ब्रजभाषा में रचना की है। ब्रजभाषा के साथ-साथ गुजराती, फारसी, संस्कृत आदि भाषाओं का भी इन्हें ज्ञान था।

गबरी बाई (सन 1758-1808 ई0) गुजरात के ऐसे भक्त कवियों में से एक हैं जिन्होनें सगुण के साथ निर्गुण साधना से सम्बन्धित काव्य की रचना भी की है। इनका जन्म डूंगरपुर में हुआ था[94] जोकि गुजरात का सीमावर्ती स्थान है और इसलिए इन्हें राजस्थान का भी कहा जा सकता है।

डॉ0 रामकुमार गुप्त के अनुसार इनके सगुण भक्ति के पदों में मीराँ की-सी तन्मयता दीख पड़ती है।[95]

के. का. शास्त्री ने इन्हें गुजरात की ज्ञानाश्रयी कविता लिखने वाली कवयित्रियों में सर्वप्रथम माना है।[96]

राग ललित, ख्यामणी, पूरबी, रेखतो, काफी आदि रागों में बद्ध इनकी पद, साखी आदि रचनाओं में शरीर और आत्मब्रह्म जीव, और मन, माया का अभूतपूर्ण समावेश मिलता है। ***'गबरी कीर्तन माला'*** में इनकी अमूल्य कृति समाहित हैं।

इनकी काव्य-रचना का एक उदाहरण देखिए-

''प्रभु मोकुं एक भरोसो तिहारो
तुम समान मेरे और न दूजो, सकल भुवन निहारो।''[97]

'गुजरातीओए हिन्दी साहित्य मां आपेलो फालो' नामक पुस्तक में श्री डाह्याभाई पीताम्बरदास देरासरी ने 18वीं शताब्दी के कवियों में रघुराम (सभासार), कवीश्वर केवलराम जी, आदितराम जी, लक्ष्मीराम जी, उत्तमराम जी, हरिनाथ (सन् 1773 ई0 में 'अलंकार-दर्पण') आदि का उल्लेख किया है।[98]

18वीं शताब्दी के प्रमुख सूफी कवियों में ***हाशिम अली*** रहे हैं। इनका उपस्थिति काल सं. 1793 है। इनकी 238 मर्सियों (शोकांजलि) का संग्रह ***'दीवाने हुसैनी'*** नाम से मिलता है। हाशिम अली ने विभिन्न विषयों पर अपनी मर्सिया लिखी हैं। जैसे- कासिम और सकीना की विदाई, कासिम की वीरगति, कर्बला में हुई निर्मम हत्याओं का वर्णन, फातिमा विलाप आदि। अली के शब्दों में 'शायराने-दखिन', अपने समकालीन कवियों रूही, मिर्जा, कादिर आदि पर भी उन्होंने स्मरणाँजलियाँ लिखी है। इनकी मर्सिया का उदाहरण देखिए-

''तुझकूँ हासिम अली हुसेन सरूर।
हर बरस मर्सिया लिखाते हैं।।
लिखूँ कहाँ तलक मैं बयाने सितम।
मुजे हर बरस ले के तीरे-कलम।।
कहाँ तक मैं लिखूँ इस गम की बाताँ।
कि दिल में जोश सों पुर-खां हैं आखाँ ॥''[99]

संवत् 1700 से 1900 विक्रम तक के समय के मुसलमान संतों में ***हुसैन खाँ, झूलन फकीर, शम्मद शेख, बाबा मलिक, बाबा गुलशन, संत दाना साहेब*** आदि के नाम उल्लेखनीय हैं जिनकी हिन्दी रचनाओं के कुछ नमूने 'कल्याण-सन्तवाणी' अंक, वर्ष 29, संख्या-1, पृ. 448-49, में मिलते हैं।[100]

डा0 रानु मुखर्जी ने 18वीं शताब्दी के कृष्ण भक्त कवि ***रत्नो भावसार, गुलाबदास*** और सूरत के मुसलमान फकीर ***अनवरखान*** का उल्लेख किया है जिन्होंने हिन्दी में पद, कुंडलियों के साथ-साथ साखियाँ भी लिखी हैं।[101]

महाराव लखपतिसिंह

कच्छ के महाराव लखपतिसिंह जी का जन्म सन् 1710 ई0 और मृत्यु सन् 1761 ई0 में हुई। महाराव लखपति सिंह साहित्य एवं ललित कलाओं के अनन्य प्रेमी थे। कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह के अनुसार-''महाराव लखपतसिंह की प्रतिभा बहुमुखी थी, उनका व्यक्तित्त्व बहु आयामी था। वे केवल कवि ही नहीं थे, महान संगीतज्ञ, कुशल नृत्य विद्या विशारद, सफल चित्रकार अनेकानेक उपयोगी कलाओं के मर्मज्ञ एवं उन्नायक, राजनय कोविद एवं अप्रतिम योद्धा थे।''(102) इन्होंने ब्रजभाषा के प्रसिद्ध विद्वान एवं जैन आचार्य कनक कुशल को कच्छ में निमंत्रित कर ***ब्रजभाषा काव्य पाठशाला*** की स्थापना की जो महाराव लखपतिसिंह जी के साहित्य-मर्मज्ञ होने का परिचायक है। आचार्य कनक कुशल ने कई ग्रंथों की रचना के लिए लखपतिसिंह जी को प्रेरित किया था। इन्होंने ब्रज हिंदी में ***'सुरतरंगिणी'***, (सन् 1737 ई. में संगीत शास्त्र सम्बन्धी रचना), ***'लखपति शृंगार'*** या ***'रसतरंग'*** (1747 ई. में रचित नायक-नायिका भेद सम्बन्धी शृंगार रस का ग्रंथ), ***'सदाशिव विवाह' (1761)', मृदंग मोहरा', 'सुन्दर शृंगार', 'लखपति भक्ति विलास' (1760)*** और फुटकल पदों की रचना की है।

'लखपति शृंगार' नामक ग्रंथ में इन्होंने आठ प्रकार की नायिकाओं का वर्णन किया है जो कहीं-कहीं मर्यादा का अतिक्रमण करता-सा प्रतीत होता है। विश्रब्ध-नवोढ़ा नायिका का एक उदाहरण देखिए।

''सीस सों सीस, मुखै मुख सों, छतियाँ अपनी छतियाँ बरजोरी
बाहुसों बाहु लपेटी लई कटिसों कटी गाढी करी है किशोरी
जोंघसों जंघनि पिंडिसों पिंडन बाँधे पगेपग घुंघरु डेरी
राति की रीझ लखी मैं सखी तब तें मोरे चित्त में चित्त विहोरी''(103)

मेहरामण सिंह जी

महाराव मेहरामण सिंह (वि. सं. 1813-1852) राजकोट (सौराष्ट्र) के जाड़ेजा राजकुमार थे। उन्होंने ***'प्रवीण सागर'*** नामक एक प्रेमाख्यानक महाकाव्य की रचना की। इसकी पहली 60 लहरें मेहरामण सिंह द्वारा तथा अपूर्ण ग्रंथ के शेष अंशों का सम्पादन-संग्रह बाद में श्री दलपत डाह्याभाई और गोविंद गिल्लाभाई ने किया। इसमें नवरस-भेद, नायिका-भेद निरूपण के साथ ज्योतिष, आयुर्वेद, राजनीति, काव्यशास्त्र शकुन शास्त्र, नाट्यशास्त्र आदि विभिन्न उपयोगी शास्त्रों का वर्णन मिलता है।

84 सर्गों के इस बृहद् प्रबन्ध-काव्य में परम्परागत शैली में मंगलाचरण, दोहा,

चौपाई, तोमर, चामर, सवैया, झूलना आदि प्रचलित एवं अप्रचलित लगभग 40 छन्दों का प्रयोग विभिन्न भाषाओं-मराठी, कच्छी, गुजराती, पंजाबी, उर्दू आदि तथा भाषा-शैलियों का प्रयोग हुआ है। एक भाषाप्रयोग देखिए-

मथुरी सखी *''जाहिको या जगत में, जाहिरहे ''जयपुर'',*
भाग्यको ''उदयपुर'', भलो जाको आज है।
जाहिको सेना में शस्त्राधारी जन ''जोधपुरे'',
भंडार ''भरतपुर'' सुर को समाज है।...॥
लहर 76 - छन्द 18 ॥[104]

(लहर 76-यह अंश दलपतराम डाह्याभाई द्वारा रचित है)

सम्पूर्ण ग्रंथ ब्रजभाषा में लिखा है परन्तु कहीं उसके स्वरूप में डिंगल तो कहीं ब्रजभाषा तो कहीं खड़ी बोली की झलक मिलती है।

कच्छ (भुज) की ब्रजभाषा पाठशाला

"Poet is born, not made" अर्थात् कवि जन्म लेते हैं, निर्मित नहीं होते। विश्व की इस बहुश्रुति को चुनौती देने वाली संसार-भर में एक ही संस्था हुई है -'कच्छ की ब्रजभाषा काव्यशाला'।[105] ब्रजभाषा के अनन्य प्रेमी महाराव लखपत सिंह जी ने सन् 1741 में कच्छ-भुज के सिंहासन पर आरूढ़ होने के बाद एक ब्रजभाषा पाठशाला (कवि बनाने की काव्यशाला) की स्थापना सन् 1747 में की और सन् 1948 में, कच्छ राज्य के भारत में विलीन होने के साथ ही यह समाप्त हो गई।

कच्छ (गुजरात) के महाराव लखपति सिंह ने अपने शासन काल में अठारहवीं शताब्दी में ब्रजभाषा के प्रचार एवं साहित्य-सृजन हेतु एक पाठशाला की स्थापना की थी। इससे हिन्दी भाषी गुजरात प्रदेश में ब्रजभाषा का महत्त्व बढ़ा और प्रचार भी हुआ। हिन्दी-काव्यधारा के विकास में इसका महत्त्व अवर्णनीय है। इस पर डॉ0 निर्मला आसनानी ने स्वतन्त्र शोध ग्रंथ लिखा है।

महाराव लखपत सिंह ने ब्रजभाषा एवं साहित्य के विद्वान आचार्य कनक कुशल एवं उनके शिष्य कुँवर कुशल को उनकी विद्वता से प्रभावित होकर कच्छ आमंत्रित किया और उन्हें 'रेहा' नामक जागीर एवं भट्टारक की पदवी से अंलकृत कर काव्यशाला के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। करीब सवा सौ वर्षो तक यह पाठशाला 'कुशल' शाखा के जैनाचार्यों के संचालन में रही। इनमें कनक कुशल, कुँवर कुशल, वीर कुशल, राज कुशल, जय कुशल, धर्म कुशल, वल्लभ कुशल, जीवन कुशल, भक्ति कुशल आदि हुए। कालांतर में यह

पाठशाला जैनेतर आचार्यों को सौंपी जिनमें आचार्य प्राणजीवन, हम्मीर जी खड़िया, केशव अचायी, जाड़ेजा कवि उन्नड़जी, जीवराम अजरामर आदि पाठशाला के आचार्य-पद पर प्रतिष्ठित हुए शंभुदान अयाची पाठशाला के अन्तिम आचार्य थे।

इस पाठशाला का पाठ्यक्रम 5 से 7 वर्ष का था। प्रवेश आयु 14 से 30 वर्ष की तथा भोजन-निवास, शिक्षा आदि भी निःशुल्क थे। यह पाठशाला अनेक अर्थों में विशिष्ट थी। इसकी पहली विशेषता कि यह आज से 250 वर्ष पूर्व ब्रजभाषा की पाठशाला सुदूर अहिन्दी भाषी कच्छ प्रदेश में स्थापित हुई।

इसकी दूसरी विशेषता यह कवि बनाने की काव्यशाला थी। महाराव लखपत सिंह के अनुसार अन्य कलाओं की तरह प्रतिभा को प्रशिक्षण द्वारा निखार कर कवि भी बनाए जा सकते हैं। इस पाठशाला के पढ़े सैकड़ों छात्र कवि के रूप में प्रख्यात हुए और रजवाड़ों में राजकवि के रूप में नियुक्त हुए। इस पाठशाला के प्रशिक्षित कवियों में स्वामीनारायण सम्प्रदाय के स्वामी ब्रह्मानंद और गुजराती साहित्य के सुप्रसिद्ध कवि दलपतराम भी हैं।

कच्छ के महारावों के साथ-साथ इसके आचार्यों एवं अध्यापकों द्वारा कविता के साथ-साथ काव्यशास्त्र तथा शिक्षा विषयक ग्रंथों की ब्रजभाषा में रचना की तथा अनेक ग्रंथों की टीका व दीपिकाएँ लिखी। इन ग्रंथों में कुँवर कुशल कृत 'लखपति जसंसिधु', हम्मीर जी रत्नू कृत 'लखपति पिंगल', उन्नड़जी कृत 'भागवत पिंगल' उल्लेखनीय हैं। टीकाओं में आचार्य कनक कुशल कृत 'कविप्रिया', एवं 'रसिक प्रिया' की टीका, महाराव लखपति कृत 'सुन्दर श्रृंगार' एवं 'बिहारी सतसई' की टीका, जीवाभाई शामल कृत 'जगत विनोद टीका' और हम्मीर दान लाखाजी मोतीसरा कृत 'नागदमन टीका' उललेखनीय हैं।

इस पाठशाला में ब्रजभाषा में काव्य के दंशागों, व्याकरण, पिंगल, अलंकार, नायिका भेद आदि पर विशेष बल और अभ्यास करवाया जाता था। पाठ्यग्रंथों में 'पृथ्वीराज रासो', 'भाषाभूषण', 'सुन्दर श्रृंगार', 'बिहारी सतसई', 'सूरसागर', 'रामचरितमानस' जैसे ग्रंथ थे। अन्त में मौखिक तथा लिखित परीक्षा होती थी तथा उत्तीर्ण होने पर 'कवि' की पदवी से सम्मानित किया जाता था। कच्छ के दीवान मणिभाई जसराज जैसे साहित्य-मर्मज्ञ ने पाठशाला के परीक्षार्थियों को 'बावनी' ग्रंथ-रचना पर पुरस्कार देने की परम्परा प्रारम्भ की। गुजरात में रचित 65 बावनियाँ प्रकाश में आई है जिनमें 'उपदेश, बावनी', 'प्रबोध बावनी', 'विरह बावनी', 'वैराग्य बावनी', 'खेंगार बावनी', ' हम्मीर बावनी', 'दलपत सतसई' उल्लेखनीय हैं।

डॉ0 निर्मला आसनानी ने लिखा है, ***"कच्छ की काव्य पाठशाला रीतिकालीन***

साहित्य की सभी परम्पराओं एवं प्रवृतियों से अंलकृत थी। ..... काव्यांगों एवं भाषा शैली के निरूपण में ही ये कवि पारंगत नही थे, बल्कि इतर ज्ञान में भी इनका फलक विस्तृत था। काव्यशास्त्र के अलावा इन कवियों ने ज्योतिष, संगीत, नृत्य, अश्वशास्त्र वैद्यक, कामशास्त्र, स्वरोदयशास्त्र योगशास्त्र, दर्शन-पुराण एवं सामुद्रिक शास्त्र के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ रचे थे।''(106)

इस संस्था से कवि-पद प्राप्त करने के बाद यशस्वी बनने वाले कवियों में कृतकृत्य हृदय से इस पाठशाला को उत्कृष्ट एवं उचित अंजलि देते हुए कवि न्हाना लाल दलपतराम ने 'कविश्वर दलपतराय' नाम ग्रंथ में कहा है-

''कच्छ राज्य का सिंहासन तो भुजिया है, पर उसका कीर्ति-मुकुट तो भुज की ब्रजभाषा पाठशाला है।''(107)

इस पाठशाला के आश्रयदाताओं, आचार्यों एवं कवियों ने ब्रजभाषा में काव्य-रचना करके भारत के पश्चिमी क्षेत्र में ब्रजभाषा एवं रीति काव्य-परम्परा का प्रवर्तन किया था। इस पाठशाला के आश्रय में रचित विपुल साहित्य भावों की विदग्धता, डिंगल-पिंगल भाषा की भंगिमा, रस, छन्द अंलकारों तथा काव्य शास्त्रीय सिद्धान्तों के अनुरूप विशिष्ट एवं विविधता से पूर्ण है। अनेक देवी-देवताओं की स्तुति के साथ ज्ञान, वैराग्य एवं नीति परक छन्दों द्वारा इन कवियों ने तत्कालीन समाज में नव-जागरण की चेतना का संचार भी किया है।

श्री दूलेराय काराणी ने अपने ग्रंथ ***'कच्छना संतों अने कविओं'*** में लिखा है- ***''कवि श्री लखपत सिंह जी ने इस संस्था की स्थापना करके समस्त देश पर एक महान उपकार किया है। जहाँ कवि होने का प्रमाणपत्र प्राप्त किया जा सके, ऐसी एक भी संस्था भारत वर्ष में कहीं नहीं थी। इस संस्था की स्थापना करके महाराव ने समस्त देश की एक बड़ी कमी दूर कर दी... इस संस्था से निकलने वाले कवियों ने सौराष्ट्र और राजस्थान के अनेक प्रदेशों में अपना नाम प्रख्यात कर इस संस्था को यशस्वी बनाया है।''***(108)

कच्छ के चारणों की रत्नू शाखा के कवि ***हमीरदान*** ने ***'गुण पिंगल प्रकाश'*** (1712) और ***'लखपत गुण पिंगल'*** (1740) नामक ग्रंथ लिखे हैं।

कवि ***हरिचरन दास*** ने सन 1794 में ***'सभा प्रकाश'*** ग्रंथ की रचना की।

उदयपुर के महाराणा जयसिंह के आश्रित कवि अहमदाबाद के ***दलपतिराय-बंसीधर*** (1731 में विद्यमान) नामक कविद्वय ने ***'अंलकार रत्नाकर'*** (1742) की रचना की है। प्रस्तुत ग्रंथ में 4 तरंग हैं। प्रथम तरंग ग्रंथ पीठिका निरूपण में 19 दोहे और 1 कवित्त

को मिलाकर कुल 20 छन्द है। प्रस्तुत ग्रंथ में निर्माण-विषयक कवि की उक्ति-

''कीने रसमय रसिक कवि सरस बढ़ाय विवेक।
छाया लहि गिरिबान की भाषा ग्रंथ अनेक ॥5॥

o o o

मेदपाठ श्रीपाल कुल विप्रा महाजन काय।
बासी अमदाबादके बंशी दलपतिराय ॥10॥''(109)

महाजन जाति के बंसीधर के नाम से भी ***'शृंगार-सिंधु'*** नामक स्वतन्त्र ग्रंथ मिलता है। भरूच के सुप्रसिद्ध कवि कृष्णदास के वंशज ***भगवानदास रिझवार*** ने ***'शृंगार सिंधु'*** की रचना 1724 ई. में की थी। अन्य रिझवार नामक कवि द्वारा रचित ***'अंलकारादर्श'*** ब्रजभाषा में मिलता है। ब्रजभाषा पाठशाला में दीक्षित कवि गोप ने ***'काव्य प्रभाकर'*** ग्रंथ की रचना की थी। इसे ***'रुक्मिणी हरण'*** के नाम से भी जाना जाता है। श्रीमाली ब्राह्मण कुलोत्पन्न दलपतराम (सन् 1791 ई0) ने 'दलपति-विलास' नामक स्वतन्त्र ब्रजभाषा ग्रंथ की रचना की है।

19वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

19वीं शताब्दी में दयाराम जैसे उत्कृष्ट वैष्णव कवियों के साथ-साथ ब्रह्मानन्द स्वामी आदि सम्प्रदाय बद्ध कवियों की उत्कृष्ट रचनाएँ मिलती हैं। राधा-कृष्ण विषयक भक्ति रचनाओं के साथ ही ज्ञान-वैराग्य से परिपूर्ण पद भी मिलते है। इस शताब्दी में गोविन्द गिल्लाभाई आदि कवियों द्वारा रीतिपरक ग्रंथों का भी सृजन हुआ। दलपतराम डाह्याभाई जैसे आधुनिक ढंग की कविता करने वाले कवि भी इसी शताब्दी की देन हैं। साहित्य की दृष्टि से यह शताब्दी समृद्ध है।

दयाराम (1777-1853 ई.)

चांड़ौद-निवासी रससिद्ध भक्त कवि दयाराम गुजरात के उत्तर मध्यकालीन कृष्ण भक्त कवियों में निर्विवाद सर्वश्रेष्ठ और अप्रतिम हैं। इस कवि को ब्रजभाषा के प्रति अनुराग था। इस गुजराती कवि ने ब्रजभाषा में 47 ग्रंथों और 12000 स्फुट पदों की रचना की है।(110) ये गुजराती के अतिरिक्त संस्कृत, ब्रज, खड़ीबोली, मराठी, तमिल, तेलुगु, फारसी इत्यादि भाषाओं के भी ज्ञाता थे। डा0 पाठक ने इनके द्वारा रचित कुल 47 ग्रंथों के नामों का वर्णन किया है।(111) इनमें से कवि के उपलब्ध ब्रजभाषा ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है-(112)

'सतसैया', 'रसिक रंजन', 'क्लेश कुठार', 'भक्ति विधान', 'कौतुक रत्नावली', 'विज्ञप्ति-विलास', 'वस्तुवृन्द दीपिका', 'पिंगल सार', 'सिद्धान्त सार',

'सम्प्रदाय सार', 'पुष्टिपथ सार मणिदास', 'पुष्टिभक्ति रूप मालिका', 'श्री कृष्ण स्तवनामृत', 'श्री कृष्ण स्तवन चन्द्रिका', 'नाम प्रभाव बत्तीसी', ' हरिदास मणिमाला', 'श्रीमद्भागवत अनुक्रमणिका', 'चातुर चित विलास', 'वृन्दावन विलास', 'अनुभव मंजरी', 'हरिस्वप्न सत्यता'।

श्रीमती वन्दना खण्डेलवाल ने दयाराम के चार अन्य उपलब्ध ग्रंथों का भी उल्लेख किया है- ***'मूर्ख लक्षणावली', 'प्रस्ताव चन्द्रिका', 'श्रीकृष्णअकलचरित चन्द्रिका'*** और ***'माया खण्डन'***।(113)

डॉ0 रानु मुखर्जी ने दयाराम के 'रसथाल' नामक ग्रंथ में एक अन्य ***'साखी-दूहा'*** कृति का उल्लेख किया है। यह ब्रजभाषा में लिखा एक स्वतन्त्र ग्रंथ है जिसमें इस ग्रंथ के नामकरण का उल्लेख कवि द्वारा इस प्रकार किया गया है-

''वैष्णों वल्लभी साठो देश, सब हरिजन को दास,

साखी दुहा अस नाम धर्यो, श्री कृष्ण मिलन की आस ॥243॥''(114)

डॉ0 रानु मुखर्जी ने इस ग्रंथ का उल्लेख करते हुए इसे अपनी 'निजी देन' कहा है।(115)

अपने विषय में कवि दयाराम ने स्वयं अपने ग्रंथ 'अनुभव मंजरी' में अपनी जन्माक्षर (जन्म पत्रिका) प्रस्तुत की है। उसी को प्रमाण मानकर उनका जन्म शनिवार तदनुसार 16 अगस्त सन् 1777 ई. को निश्चित होता है। इनका मूल नाम दयाशंकर, पिता का नाम प्रभुराम भट्ट और माता का नाम महालक्ष्मी था। इनका निधन सोमवार तदनुसार 31 जनवरी, 1853 ई. को डभोई में हुआ। इन्होंने श्री नाथद्वारा के गोस्वामी श्री वल्लभ जी महाराज से पुष्टिमार्ग की विधिवत् दीक्षा ली थी और तभी से दयाशंकर 'दयाराम' बने।

सतसैया

गुजरात में 'दयाराम सतसई' के प्रथम शास्त्रीय सम्पादन एवं सटीक प्रकाशन (साहित्य भवन, इलाहाबाद से हुआ है) का श्रेय डॉ0 अम्बाशंकर नागर जी को है। कवि दयाराम की हिंदी-कृतियों में 'सतसैया' या 'सतसई' सर्वोत्तम कृति मानी जाती है। यह ग्रंथ संवत् 1872 में लिखा गया जिसका उद्देश्य श्री कृष्ण को रिझाना था। इसमें कुल 732 दोहे है जिसमें भक्ति के अतिरिक्त शृंगार, प्रेम, नायिका-भेद, काव्यचातुर्य, गणित आदि के सुन्दर उदाहरण है। यह ग्रंथ 15 प्रकरणों में विभक्त है।

'दयाराम सतसई' में मुख्यत: भक्ति, नीति और शृंगार विषयक दोहे है। एक नीति-विवेक विषयक दोहे का उदाहरण देखिए-

''बड़े न हूजै गुननु बिनु बिरद-बड़ाई पाइ।
कहत धतूरे सौं कनकु, गढ़नों गढ़्यो न जाइ ॥191॥[116]

रसिक रंजन

'रसिक रजंन' दयाराम का हिन्दी भाषा का दूसरा सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ है। कवित्त शैली में रचित 280 छंदों का यह ग्रंथ 17 प्रकरणों में विभक्त है जिनमें कृष्ण के प्रति अनन्यता, भगवदाश्रय, दीनता, कृपा, ईश्वरता, भगवद्इच्छा, विज्ञप्ति प्रार्थना, स्तुति हैं। 'रसिक रंजन' में कवि मुँहलगे भृत्य की भाँति भगवान को चुनौती देते हुए कहता है-

''रंक जानि दयाकूं डूबोओंगे जो दयानाथ।
अकेलो नहि डूबूं लेते बर्दकू डुबाऊंगा ॥''[117]

वस्तु वृन्द दीपिका

यह ग्रंथ गुजराती में 'दयाराम काव्य सुधा' में छपा है। दयाराम का तीसरा महत्वपूर्ण ग्रंथ 'वस्तुवृन्दादीपिका' (सं0 1874) है जिसमें उन्होंने 1 से 178 तक की सँख्या को लेकर, प्रत्येक अंक की वस्तुओं का सम्बन्ध श्री कृष्ण से दिखाया है।[118]

दयाराम ने 'नव' संख्या के अन्तर्गत नवरस, नव निधि, नवग्रह, नव नंद, नव योगी, नव दुर्गा, नव खण्ड, नव शालीग्राम चरणामृत, नवग्रह के रूप नवरत्न, नवधातु, नव नागकुल तथा विरही के नव लक्षण दिए हैं।

'क्लेश-कुठार' गुजराती में 'दयाराम काव्य मणिमाला', भाग एक में छपा है। इस ग्रंथ का मूल आशय चित्त की चिन्ता दूर करना तथा श्री कृष्ण पर प्रीति उपजाना है।

'वृन्दावन विलास' में कवि ने कृष्ण को ''श्री वृन्दावन अस ध्यैये। प्रीतम प्यारी रस पैयें।।'' कहकर उनके विलास का चित्रण किया है। प्रबन्ध बद्धता, रागबद्धता, तालबद्धता, छन्दबद्धता एवं चित्रात्मकता आदि कलापक्ष की दृष्टि से यह कृति समृद्ध है।

दयाराम की विभिन्न कृतियाँ ***'दयाराम काव्य मणिमाला'*** और ***'दयाराम काव्यसुधा'*** के विभिन्न भागों में छपी हैं। दयाराम ने फुटकल पदों में कृष्ण लीला के अनेक प्रसगों का वर्णन किया है। दयाराम ने 'रेखता' छन्द शीर्षक देकर जो काव्य-रचना की है उसमें उर्दू-फारसी भाषा की शब्दावली युक्त खड़ी बोली है।[119] दयाराम के सभी पद विभिन्न राग-रागिनियों में निबद्ध हैं।

ब्रजभाषा में काव्य-रचना करने वाले गुजरात के वैष्णव कवियों की सुदीर्घ परम्परा के कवियों में कृतियों के परिणाम एवं काव्योत्कर्ष की दृष्टि से दयाराम का स्थान अप्रतिम एवं सर्वश्रेष्ठ है।

नृसिंहचार्य का जन्म सूरत के कडोद गाँव में सं0 1910 में विसनगरा नागर परिवार में हुआ और देहान्त सं. 1953 वि. में हुआ। ये अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्तित्त्व के स्वामी थे जिससे इनका शिष्य समुदाय बहुत विशाल था। इनके 10 प्रसिद्ध गुजराती ग्रंथ हैं जिनमें हिन्दी रचनाएँ भी संकलित हैं। संस्कृत, फारसी, हिन्दी, गुजराती, अंग्रेजी भाषा के जानकार होने के कारण इनकी रचनाओं में भी विभिन्न भाषाओं के शब्द मिलते हैं। इन्होंने विभिन्न छंदों और राग-रागिनियों का अपने पदों में प्रयोग किया है। इनकी वाणी आरती, पद, होरी, गजल, रेखता, ठुमरी, धोळ आदि विभिन्न काव्यरूपों में मिलती है।

मुड़िया स्वामी का समय सन् 1852 से 1929 ई. का माना जाता है। इनका मूल नाम दयानंद है। बचपन से ही भक्ति, सत्संग तथा आध्यात्म-चिन्तन के प्रति रुचि थी। इनकी प्रकाशित रचनाओं में ***'गायत्री', 'अक्षर-चौबीस', 'ब्रह्मविलास', 'शिष्यधर्मोपदेशिका', 'प्रबोध-भजनावली'*** तथा फुटकल पद हैं। इनकी भाषा सधुक्कड़ी हिन्दी है जिस पर गुजराती और पंजाबी प्रभाव है।

अर्जुन भगत का जन्म सं० 1806 में तथा मृत्यु सं० 1976 विक्रम में माना जाता है। ये अंकलेश्वर तालुका के थडखोल गाँव के निवासी हैं। दोहा, चौपाई, कुंडलिया, मनहर, झूलना आदि छन्दों में रची इनकी रचनाएँ ***'अर्जुनवाणी'*** में संकलित हैं। इनकी भाषा में रहस्यात्मकता, भक्ति-भावना, व्याकुलता आदि भावना दृष्टिगोचर होती है। इन्होंने अखा, भोजा की तरह बाह्याचारियों को चाबुक भी लगाए हैं।

संत ***महात्यम राम*** का जन्म सं. 1882 में तथा मृत्यु सं 1945 को सीमरडा गाँव (जिला खेड़ा) में हुआ। इनकी रचनाओं में ***'बड़ी चिंतामणि', 'चमर कडी बंद छंद', 'छोटी चिन्तामणि', कक्का, मास, तिथि, शब्द बाण, 'सुधासिधु', विभिन्न अंगों में विभक्त साखियाँ, 'अखण्ड प्रकाश' तथा 'भक्त नामावलि'*** विशेष उल्लेखनीय है।[120] इन्होंने लघु भक्तमाल की भी रचना की है। इनकी भाषा प्रवाहमयी और शैली समधुर, आलंकरिक अंलकृत तथा संगीतात्मक है।

सूरत के संत ***निर्मलदास*** का जन्म सं. 1882 में तथा देहान्त सं. 1935 में हुआ। इनकी हिन्दी रचनाओं में 'ज्ञान बारहमासा', पद और साखियाँ है। इन्होंने कबीर की भाँति हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रतिपादन तथा बाह्याचारों का खण्डन किया है। हिन्दी की रचनाओं में ब्रजभाषा का प्रभाव भी है।

जूनागढ़ निवासी ब्रह्मज्ञानी नागर संत कवि ***मनोहर दास*** (1788-1845 ई.) संस्कृत, फारसी, गुजराती और हिन्दी के अच्छे जानकार थे। इन्होंने अपनी कविताओं में

ब्रह्मस्वरूप को पहचान कर जीवन-मुक्ति प्राप्त करने का उपदेश दिया है। उनके फुटकल हिन्दी पद मिलते हैं। इनकी हिन्दी कविता सरल होते हुए भी सचोट है। पाखंडियों को इन्होंने खूब लताड़ा है।

एक उदाहरण दृष्टव्य है-

''भल कलयुग में भांड भवैया, परमहंस बनी बेठत भैया।।टेक।।0
कुतसित नरकुं कहत कनैया,
ब्रह्मविद्या की बात न जानत,
झुम झननन ठुम ठनन बजैया ॥भ0॥[121]

इनके ब्रज के से प्रभावित खड़ी बोली हिन्दी के फुटकल पद मिलते है। इनके पद ***'भजन सागर'*** (भाग 1, 2) तथा ***'भजन सार सिंधु'*** में संग्रहीत हैं।

भोजो भगत

काठियावाड़ के प्रसिद्ध संत भोजो भगत (1784-1850 ई.) अत्यन्त प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। इनकी वाणी मार्मिक एवं प्रभावोत्पादक थी। इन्होंने समाज की कुरीतियों को आड़े हाथों लिया है और उस पर वाणी के चाबुकों की वर्षा की है। गुजराती साहित्य में इनके 'चाबखे' बहुत प्रख्यात हैं। इन्होंने ज्ञान, वैराग्य,भक्ति, योग और गुरु-महिमा आदि पर भजन, प्रभातियों, कीर्तन, काफी इत्यादि की रचना की है। भाषा अपरिमार्जित एवं अव्यवस्थित है। इनके कुछ हिन्दी पद ***'प्राचीन काव्य माला'-भाग 5*** में संग्रहित हैं। इनकी रचनाओं का एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

''संतो दिया रे अगम पर डेरा।
पिया पियाला जेणे प्रेमरस केरा, नाथकू निरख्या नेरा ॥सं0॥
o o o
'भोजो' कहे गुरु प्रतापे, फरी नहीं फरीए फेरा ॥''[122]

छोटम

छोटम (ई. स. 1812 से 1884 तक) का जन्म पेटलाद तालुका के मलातज गाँव के एक नागर परिवार में हुआ। बचपन से ही इनकी रुचि अध्यात्म की ओर थी। इन्होंने पाखंडियों के पंथ का खंडन करके नीति-धर्म की स्थापना के लिए लोगों को गुजराती और हिन्दी में उपदेश दिए। अपने अंतिम दिनों में 'बोध-सुधा'[123] नामक हिन्दी ग्रंथ भी लिखा था जो कि अप्राप्य है। छोटम की हिन्दी साखियाँ, पद, भजन, कीर्तन, लावणी प्रसिद्ध है जिनके आधार पर यह कह सकते है कि इनकी रचनाएँ अत्यन्त भावपूर्ण और सारगर्भित हैं। एक

उदाहरण देखिए:-

''आदर को महिमा बड़ो, केतो कहुं बनाय,
छोटम सो महापुरुष को, जश जग में सब गाय।''(124)

छोटम द्वारा रचित 262 के करीब साखियाँ उपलब्ध हैं। इनमें से 200 के करीब हिन्दी साखियाँ है। इनमें कुल मिलाकर 40 आख्यान, 35 खंडकाव्य, 400 के करीब कीर्तन तथा साखियाँ मिलते हैं। इन्होंने जाति-पाँति गत भेद, बाह्याचारों आदि का तीक्ष्ण वाणी में विरोध किया है। इन्होंने ज्ञान, भक्ति और वैराग्य के पद लिखे हैं।

जामनगर के महाराज रिड्मल जी की राजकुमारी ***जामसुता प्रताप बाला*** (जन्म 1835 ई.) परम विदुषी एवं कवयित्री थीं। बचपन से ही कविता-निर्माण में रुचि थी। मीराँ की-सी कृष्ण भक्ति के समान कृष्ण का रूपचित्रण करने वाला यह पद इनकी काव्य-शक्ति का परिचायक है। यथा-

''वारी थारा मुखडा री श्याम सुजान।
मंद मंद मुख हास विराजे कोटिन काम लजान।
० ० ०
जामसुता, प्रभु सों कर जोरे, दो मम जीवन प्रान ॥''(125)

'प्रतापकुंवरी' के नाम से प्रसिद्ध इनके पदों के संग्रह की भाषा ब्रज है जिस पर राजस्थानी का प्रभाव परिलक्षित होता है।

दीन दरवेश की निश्चित जन्म तिथि नहीं मिलती। इनका समय 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध का माना जाता है। अधिकांश इतिहासकार इन्हें सौराष्ट्र का मानते हैं। हिन्दी में लिखी इनकी कुंडलियाँ प्रसिद्ध हैं। इनकी रचनाओं में एक और सूफियों की-सी प्रेम की पीर है तो दूसरी ओर वेदान्त एवं अन्य ज्ञानमार्गी सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति। डॉ0 नागर के अनुसार-''गुरु का आदेश होने के कारण ये आत्मचिंतन को ही अधिक महत्त्व देते थे और सदा आत्मरत एवं तल्लीन रहते थे।''(126) उदाहरणार्थ कुंडलियाँ नीचे दी जा रही है-

दीन दरवेश की वाणी, कुंडलियां-छन्द

''जितना दीसे थिर नहीं, थिर है निंरजन नाम।
० ० ०
कहे 'दीन दरवेश', कहा इतने पर इतना।
थिर निज मन सत शब्द, नाहिं थिर दीसे जितना ॥''(127)

डॉ0 बड़थ्वाल द्वारा इनकी रचित सवालाख कुंडलियों का अनुमान लगाया गया है।[128] इन्होंने पालनपुर के नवाब शेर खाँ और बड़ौदा के महाराजा फत्तेह सिंह गायकवाड की मृत्यु पर भी कुंडलियाँ लिखी हैं।

इस शती में स्वामीनारायण सम्प्रदाय के ब्रह्मानन्द स्वामी सुप्रसिद्ध हुए हैं जिन्होंने ब्रजभाषा पाठशाला के आचार्य अभयदान के पास अंलकार और भाषा-शास्त्र का अध्ययन किया था। इनका अन्यत्र विस्तृत विवेचन किया गया है।

मीर मुराद

गुजरात में मीर-मीरासि ढाढ़ी-डोम आदि जातियों द्वारा समय-समय पर काव्य-रचना हुई है। मौखिक परम्परा में जीवित रहने से इसमें से अत्यल्प ही लिपिबद्ध हो सका है।

'मीर काव्य-परम्परा एवं गुजरात का जन कवि मीर मुराद' नामक ग्रंथ में डॉ0 चन्द्रकांत मेहता ने मीर मुराद का उल्लेख किया है। मीर मुराद का जन्म सन् 1823 ई. में मुसलमान परिवार में हुआ।

डॉ0 मेहता ने अपने ग्रंथ में मीर की रचनाओं का उल्लेख किया है- वे इस प्रकार है। ***1. 'बोध बहोतरी' (सं. 1935 में रचित), 2. 'गरुड हनुमान संवाद', 3. 'बंदगी बंध', 4. 'सूम-दातार संवाद', 5. 'गुण-वाणी-विलास', 6. 'ज्ञान-चेतावनी', 7. 'कक्क बतीसी', 8. 'कवित्त संग्रह', 9. पदसंग्रह 10. भगवान को उलाहना एवं अन्य स्फुट रचनाएँ।***

भक्ति और नीति विषय सम्बन्धी रचनाएँ मुराद ने कवित्त, सवैया आदि छन्दों में की। भाषा में संगीत, माधुर्य, सरलता और प्रासादिकता है। केशव अयाची द्वारा 'शब्द विभूषण' (सं 1945) की रचना हुई। केशव ब्रजभाषा पाठशाला के विद्यार्थी थे।

सौराष्ट्र के झाला राजाओं के हाथों भी हिन्दी की सेवा हुई है। 18वीं शती तक सौराष्ट्र का राजनैतिक वातावरण बहुत अशान्त रहा। ध्रागंध्रा के झाला राजाओं में राजा साहब अमरसिंह जी (1804 से 1843 ई0) राजा साहब रणमल सिंह जी (1843 से 1868 ई) और राजा साहब मानसिंह जी (1868 से 1900) ने हिन्दी में सुन्दर रचनाएँ की है।[129]

मानसिंहजी की रचना का एक उदाहरण देखिए-

''एक ही अगत्य बा सबकुं चेताय दे हूँ,
मानो या न मानो तोड़ फर्ज जान कहबो।

o o o

'मान' कहे सहेलना लगनी को बन्धन यों,

प्रेम-पास हुं ते जन, सदा दूर रहेबो।।'[130]

जीतामुनि नारायण (उप0 का0 विक्रम की 19वी. शती मध्य)

अखा प्रणालिका के संतजीता मुनि नारायण का जन्म नडियाद में बारोट जाति में हुआ था। ईसा सन् 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इनका अवस्थिति काल माना जाता है। इनकी रचनाएँ 'संतोनी वाणी' में संग्रहीत हुई हैं। इनकी रचनाओं में ***'काफर-बोध'***, साखियाँ तथा फुटकल पद हैं। ये गुजरात के मुस्लिम शासक मुजफ्फरशाह के समय वर्तमान थे। अपनी रचनाओं में इन्होंने गुरु और परब्रह्म, मंदिर-मस्जिद, राम-रहीम एकता का प्रतिपादन किया है।

इनके शिष्यों में ***संत कल्याणदास जी, मोहनदास ब्रह्मचारी (सूरत), संतराम महाराज*** प्रमुख हैं।

संत ***कल्याणदास*** जी की रचनाओं में फुटकल पद और साखियाँ, ***'अजगर-बोध'*** और ***'काफर-बोध'*** विशेष उल्लेखनीय हैं। इन्होंने प्रभावी भाषा में हिन्दू-मुस्लिम एकता, नामस्मरण पर बल और बाह्याचारों का खण्डन किया है। इनकी गुजराती मिश्रित भाषा पर अरबी-फारसी का प्रभाव दिखाई देता है।

नडियाद के ***संतराम महाराज*** की गुजराती मिश्रित हिन्दी में ***'गुरु बावनी'*** उल्लेखनीय है जो दोहा छंद में भावपूर्ण, सरल शैली में लिखी गई है।

नभुलाल

नाडियाद निवासी ***नभुलाल*** का जन्म सन् 1802 ई. में तथा मृत्यु 1872 ई. में हुई। ये साठोतरा नागर ब्राहमण थे। इनकी प्रमुख रचनाएँ ***'अनुभव गीता', 'तत्त्वबोध', 'गुरुगीता', 'ज्ञान परनालिका', 'निरालंबोपनिषद बोधरत्नावली', 'ज्ञान षोडशी'*** के अतिरिक्त कक्को, तिथि, मास हैं। इन्होंने विभिन्न राग-रागिनियों में बद्ध गरबा, गरबी, प्रबन्ध, धोळ, मंगल, प्रभात, आरती, राजिया, होरी, दादरा, रेखता, जकड़ी, लावणी आदि विभिन्न काव्यरूपों में रचना की है। इन्होंने ज्ञान, भक्ति, वैराग्य और निष्काम कर्म आदि साध-नों के निरूपण के साथ कृष्ण के जीवन-प्रसंगों का लीलागान भी किया है। इन्होंने गुजराती, संस्कृत, हिन्दी, ब्रज, भोजपुरी, पंजाबी आदि भाषाओं में छंद-रचना की है। इनकी भाषा-शैली मधुर, प्रासादिक, अंलकृत और संगीतात्मक है।

कुबेर दास

संत कुबेर दास 'करुणासागर' का जन्म सं. 1829 और मृत्यु 1934 में हुई। अखा प्रणालिका के संत जीतामुनि इनके गुरु थे। इनकी शिष्या अचरजबा ने '***अचरज सागर***' तथा ***शिष्य नारणदास*** ने '***सिद्धान्त बावनी***' नामक सुन्दर हिन्दी प्रबन्ध ग्रंथों की रचना की।

इनके द्वारा 18 स्वानुभवयुक्त आध्यात्मिक ग्रंथों की रचना हुई-
1. 'सकर्ता भाष्य', 2. 'स्वाचार पत्रिका', 3. 'हंसता लेवा', 4. 'विज्ञान सकृत मणिदीप', 5. 'ज्ञानगीता', 6. 'विश्वभ्रम विध्वंस-भाग 1', 7. 'अद्वैत-द्वैत नखेद चिंतामणि' 8. 'विश्वबोध चोसरा', 9. 'ज्ञान-भक्ति-वैराग्य निरूपण', 10. 'तिथि ग्रंथ ज्ञान शिरोमणि', 11. 'शिक्षा पत्री', 12. 'पंचम-षष्टम वेद', 13. 'भवतिमिर भास्कर', 14. 'परम सिद्धान्त प्रणव कल्पतरु', 15. 'केवल प्रकाश', 16. 'गुरु महिमा', 17. 'अगाध बोध', तथा 18. 'भजन-यजन उपासना विधि'। इसके अतिरिक्त रेखता, कक्का, तिथि, साखियाँ, गरबी, मगल, प्रभात तथा विभिन्न शीर्षकों में विभक्त पद भी मिलते हैं।[131]

संत केवलपुरी सं. 1905 में उमरेठ (जि. खेड़ा, गुज.) में समाधिस्थ हुए। इनकी रचनाओं में बारह राशि, वार, मास, तिथि, साधु आदि के अंग, गरबी, चिन्तामणि, रेखता, रवेणियाँ, मूलाक्षर-बारहखड़ी तथा स्फुट पद हैं। ये उदयपुर के राजवंशी भायात थे। बापू साहब के समकालीन थे।

सौराष्ट्र के कुंतलपुर गाँव के महात्मा ***हरिदास*** (सं. 1830-सं. 1902 वि0) की रचनाएँ दामोदर हीरजी जगड़े द्वारा सम्पादित ***'हरदास काव्य'***, में उपलब्ध हैं। इनकी भाषा सरल, मुहावरेदार तथा विभिन्न भाषाओं का समन्वय है।

संत ***हरिसिंह*** का जन्म जाडेजा राजपूत ठाकोर वंश में भावनगर में वरल गाँव में हुआ। इनकी रचनाओं में फुटकल पद, ग़ज़ल, लावणी व ***'ज्ञान कटारी'***, (ग्रंथ-रचना समाप्ति काल सं. 1906) उपलब्ध है। इनका भाषा पर अच्छा अधिकार था।

काजी अनवर 'ज्ञानी' (समय सं. 1899-1972वि.) के पूर्वज अरब निवासी थे। इनकी गरबी, भजन, पद, गजल, नसीहत आदि का संग्रह ***'अनवर काव्य'*** के नाम से मिलता है जो उनके शिष्य महासुख भाई चूनीलाल द्वारा संपादित है।

बापूसाहब गायकवाड (समय सं0 1835 से 1899 वि0)[132] निरांत और धीरा के समकालीन एवं शिष्य थे। इन्होंने ज्ञान-वैराग्य के पदों, गरबी, राजिया, काफियाँ, 'बारहमासा' आदि की रचना की है। उनके 'चाबखे, भी अखा की तरह परम्परागत रूढ़ियों, बाह्याचारों और ऊँच-नीच आदि जाति के भेद करने वालों पर करारी चोट करने वाले है।

गोविन्द गिल्ला भाई (ई. स. 1848-1925)

इनका जन्म सन 1848 में सिहोर (सौराष्ट्र) में हुआ। इन्होंने कच्छ की ब्रजभाषा पाठशाला में अध्ययन किया था। इन्होंने हिन्दी के प्रमुख ग्रंथों का अध्ययन भी किया था।

इन्होंने 32 ग्रंथ हिन्दी में लिखें हैं। इनमें प्रमुख रचनाएँ है- ***'नीतिविनोद', 'श्लेष चन्द्रिका', 'शृंगार सरोजिनी', 'षट् ऋतु', 'पावस पयोनिधि', 'समस्यापूर्ति प्रदीप', 'वक्रोक्ति विनोद', 'पयोधर पचीसी', 'प्रबोध पचीसी', 'शृंगार षोडषी', 'भूषण मंजरी', 'शब्द विभूषण', 'नयन मंजरी', 'अंलकारोदधि', 'शिखनख चन्द्रिका', 'विवेक विलास', 'प्रवीण सागर की बारह लहरों', 'लक्षण पचीसी', 'प्रेम पचीसी', 'रत्नावली रहस्य', 'छवि सरोजनी'।***

दलपतराम

श्रीमाली ब्राह्मण दलपत राम डाह्याभाई त्रिवेदी का जन्म सन् 1820 में बढवाण में हुआ और मृत्यु सन् 1898 में हुई। इनको आधुनिक हिन्दी साहित्यकारों में प्रथम स्थान दिया जा सकता है। इन्होंने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी पर्याप्त रचनाऐं की हैं। ***'ज्ञान चातुरी', 'श्रवणाख्यान', 'पुरुषोत्तम चरित', 'ब्रजचातुरी'*** इनकी प्रबधात्मक रचनाएँ हैं। इनका हिन्दी भाषा पर असाधारण अधिकार था। 'श्रवणाख्यान' उनकी उत्तम हिन्दी-रचना है। 'श्रवणाख्यान' से उद्धृत पंक्तियों से इनकी रचना-शैली का उदाहरण दृष्टव्य है-

''हम पंगु अंध अशक्त कों, सुत सदय द्वश से देख हूँ।
हम तृषित छुछित से छोभयुत आधार बिन अवदेख हूँ ॥2॥[133]

'सुन्दरम्' जी के अनुसार ***''दलपत राम की हिन्दी कविता में जो भाषा-वैभव एवं कलात्मकता प्रकट हुए है उतने उनकी गुजराती कविता में नही है।''***[134]

बालाशंकर कंथारिआ (ई. स. 1856-1898)

इनका जन्म नड़ियाद में साठोतरा नागर परिवार में हुआ। ये अरबी, फारसी, संस्कृत, अंग्रेजी और ब्रजभाषा के ज्ञाता थे। ***'क्लांत कवि'*** नामक पुस्तक में इनकी हिन्दी कविताओं का संकलन श्री उमाशंकर जोशी जी ने किया है। स्व0 अनंतरावल जी ने इनकी एक अप्रकाशित रचना 'शिष्य संताज' का प्रकाशन किया है, उससे अपने दिवंगत गुरु ब्रह्मनिष्ठ आचार्य नृसिंहाचार्य जी के प्रति उनकी भावनाओं का निवेदन हुआ दृष्टिगत होता है। ये 'बाल' उपनाम से कविताएँ लिखते थे।

सवितानारायण

इनका जन्म सूरत के वडनगरा नागर परिवार में सन 1840 ई. में हुआ। इन्होंने हिन्दी और गुजराती में काव्य-रचना की है। इनकी हिन्दी काव्य-रचनाओं का संपादन एवं प्रकाशन कहानजी धर्मसिंह द्वारा ***'सत्संग शिरोमणि'*** नामक काव्य-संग्रह में किया है। इसके अतिरिक्त इन्होंने कई हिन्दी रचनाओं- ***'बिहारी सतसई', 'नीति सुधा तरंगिणी', 'कवि***

प्रिया', 'श्रीकृष्ण प्रेमामृत रसायण' आदि का गुजराती में अनुवाद और संपादन किया है।

श्री हीराचन्द कानजी

ये दलपतराम और नर्मदाशंकर के समकालीन थे। ये मोरवी (सौराष्ट्र) के निवासी थे। इन्होंने ब्रजभाषा में ***'हीरा शृंगार'*** तथा ***'सुन्दर शृंगार'*** शृंगार विषयक ग्रंथों के अतिरिक्त ***'पिंगलादर्श'*** नामक ग्रंथ की भी रचनाअें की हैं। इनकी रचनाऊँ में मधुरता एवं प्रभावोत्पादकता है।

पिंगल सिंह पाता भाई गढ़वी

पिंगल सिंह पाता भाई ईसा की 19वीं शताब्दी के चारणी परिपाटी के अंतिम कवि थे। सन् 1877 में इन्होंने ***'तख्त प्रकाश'*** नामक ग्रंथ की रचना की। सन् 1892 में भावनगर के राजा ने इन्हें राजकवि के रूप में नियुक्त किया। सन् 1899 में इन्होंने महाराजा भावसिंह जी की प्रशस्ति में ***'भाव भूषण'*** (पहला भाग में) नामक प्रबन्ध काव्य की रचना की। इसके दूसरे भाग में 110 अंलकारों के लक्षण तथा उदाहरण दिये हैं। प्रत्येक अंलकार के उदाहरण में महाराजा भावसिंह की प्रशंसा की गई है। इनका ***'बैकुंठ पिंगल'*** नाम से एक ग्रंथ मिलता है।[135]

इनके पिता ***पाता भाई*** ने भी ***'जसविलास'*** नामक ग्रंथ की ब्रजभाषा में रचना की है।

20वीं शताब्दी का काव्य-साहित्य

रत्नो भगत

भुज के ममुआरा गाँव के अहीर रत्नो भगत जी का जन्म सन् 1875 में हुआ। इनके गुरु संत आत्माराम थे। अपने सदुपदेशों से इन्होंने तत्कालीन कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया था। इनके हिन्दी तथा गुजराती में स्फुट पद मिलते है जिन पर कच्छी भाषा का प्रभाव परिलक्षित होता हैं। इन्होंने नश्वर देह, घट में अंतर्यामी के निवास तथा स्वस्वरूप एवं ज्ञान के महात्म्य के गूढ़ और प्रभावोत्पादक भावों का वर्णन अव्यवस्थित भाषा में किया है। 'भजन-सार सिंधु' में इनके पद संग्रहीत हैं।

सागर महाराज

सागर महाराज का मूल नाम जगन्नाथ दामोदर त्रिपाठी था। इनका जन्म जंबुसर गाँव (गुज0) में सन् 1883 में हुआ। ***'दीवाने सागर' भाग 1,2*** में इनकी हिन्दी-रचनाएँ संकलित हैं। संपादित रचनाओं में ***'गज़लिस्तान', 'कलापीनो के कारव', 'संतोनी वाणी'*** तथा ***'अक्षयवाणी'*** प्रमुख हैं। इनके हिन्दी पद सरल एवं बोधगम्य हैं जिसमें ज्ञान और प्रेम

मुख्य विषय हैं। इन्होंने संस्कृत, गुजराती उर्दू और फारसी के शब्दों का भी खुल कर प्रयोग किया है। इनके पदों में संगीतात्मकता है।

ओंकारेश्वरी

इनका मूल नाम ललिताबहन था। ये चौबीसा ब्राह्मण जाति की थी। दाम्पत्यजीवन की असफलता के कारण इनका मन वैराग्योन्मुख हुआ। सन् 1933 में ऋषिकेश में इनका देहान्त हुआ। इनकी प्रकीर्ण रचनाओं में पद, साखियाँ, गरबा, कक्का आदि उपलब्ध हैं। इनमें विशिष्ट प्रकार की परमात्मलीनता, मस्ती एवं अन्तर की निश्छल एवं उद्दाम भक्ति के दर्शन होते हैं। इन स्वानुभवी संत कवयित्री की वाणी भाव-प्रवण एवं मार्मिक है।

रंग-अवधूत

इनका मूल नाम पांडुरंग था। इनका जन्म सन् 1899 में गोधरा में हुआ तथा मृत्यु सन् 1968 में नारेश्वर में हुई। इन्होंने दत्तात्रेय को निराकार निरंजन ब्रह्म का मूर्त रूप बताकर अवधूत-सम्प्रदाय की दत्तोपासना को नया स्वरूप दिया।

इनकी रचनाएँ हिन्दी, गुजराती, मराठी, संस्कृत एवं अंग्रेजी आदि विभिन्न भाषाओं में एवं गद्य-पद्य दोनों रूपों में उपलब्ध हैं। ***'अवधूती मौज'*** नामक ग्रंथ में इनके हिन्दी भजन संकलित हैं। इनकी रचनाओं में ***'श्री गुरु लीलामृत' 'दत्त-बावनी', 'पत्रगीत', 'संगीत गीता'*** आदि विशेष प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में पारस्परिक वैरभाव दूर कर ज्ञान, भक्ति, ईश्वर-प्रेम तथा नामजप पर बल दिया है। इनकी भाषा मिश्रित तथा भाषा-शैली परिष्कृत, सचोट, सारगर्भित एवं मार्मिक है।

मगनलाल पटेल 'पतील'

श्री मगनलाल पटेल 'पतील' का जन्म सन् 1905 में अंकलेश्वर (भरूच-गुज0) में हुआ। इनकी 57 पुस्तकें प्रकाशित हैं। लेखन के अतिरिक्त इनकी संगीत तथा चित्रकला में भी रुचि है। इन्होंने गुजराती, हिन्दी तथा उर्दू भाषा में काव्य-लेखन किया है। हिन्दी में इन्होंने पद्य-कथा, खण्डकाव्य, सोनेट, मुक्तक, काव्य नाटिका तथा एक काव्य-संग्रह 'नयी तर्झें' लिखे हैं।

उपेन्द्राचार्य नृसिंहाचार्य

उपेन्द्राचार्य भक्त एवं प्रसिद्ध विद्वान नृसिंहाचार्य के पुत्र थे। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं-***'श्री उपेन्द्र-गिरामृत', 'सुदामाख्यान', 'शुक-जनकाख्यान', 'कालीयमर्दन-आख्यान'*** और ***'दुर्वासाशापआख्यान'***। इन्होंने रास, पद, गरबा, कीर्तन, संवाद, आख्यान आदि काव्य-रूपों में गुरु-सेवा महिमा, अनासक्ति तथा कृष्ण भक्ति मुख्य विषय लिए हैं। 'सुदामाख्यान' 1800

पंक्तियों में बद्ध है जिसमें पद, गीत, चौपाई, दोहा, साखी, गीति, हरिगीत, शिखरिणी आदि मात्रिक एवं वर्णिक छन्दों का प्रयोग हुआ है।

अविनाशानन्द जी

विसनगरा नागर श्री अविनाशानन्द जी का जन्म सन् 1890 में वीरमगाम (गुजरात) में हुआ। इन्होंने ***'वासुदेव माहात्म्य', 'निष्काय शुद्धि', 'भाषा भूषण', 'कविप्रिया', 'भाषा व्याकरण', 'काव्य मुलोल', 'रसरहस्य', 'हरिरस पिंगल', 'भगवत पिंगल', 'वेदान्त पूर्ण',*** आदि ग्रंथों की रचना की है। इनके स्फुट पदों का संग्रह ***'अविनाशानन्द काव्य'*** में किया गया है। इन्होंने प्रासादिक एवं मधुर भाषा में सत्संगी-कुसंगी के लक्षण, संत-असंतों के लक्षण, पतिव्रता नारी के लक्षण, श्रीजी की बाल लीला, दानलीला एवं अन्य विविध विषयों में काव्य-रचना की है।

दूलेराय काराणी

दूलेराय काराणी कच्छभुज के सहायक शिक्षणाधिकारी थे। इन्होंने ब्रज भाषा में कविता की है। इनके सन् 1948 में प्रकाशित ग्रंथ ***'गाँधी बावनी'*** में मधुर एवं प्रासदिक भाषा में गाँधी जी की महानता का वर्णन किया गया है।

कुंवरजी नथुं वैद्य

इनका जन्म सन् 1886 में हुआ। इनके भजनों एवं कीर्तन का संग्रह कर इनकी मृत्यु के बाद इनके पुत्र अमृत लाल कुंवरजी ने ***'कुंवर जी कीर्तन संग्रह अने भक्ति विवेक'*** प्रकाशित करवाया। इनकी हिन्दी-रचनाओं की भाषा में प्रासादिकता है।

इला भाया काण

इनका जन्म भावनगर में सन् 1903 में हुआ। इनकी रचनाएँ ***'कान वाणी'*** (भाग-3) के नाम से प्रकाशित हैं। इन्होंने हिन्दी में दोहे, छप्पय, भजन, गीत आदि की रचना की है। गुजरात के चारण कवियों में इनका मूर्धन्य स्थान है। छन्दों और भाषा पर इनका पूरा अधिकार है। अपनी साहित्यिक और सामाजिक सेवा के कारण भारत सरकार ने इन्हें 'पद्मश्री' से सम्मानित किया है।

सौ. इन्दुमती ह0 देसाई

इनका जन्म पेटलाद में सन् 1825 में हुआ। इनके काव्य-संग्रह ***'श्री कृष्ण मंजरी'*** के दो भाग सन् 1935 में उपलब्ध हुए हैं। प्रत्येक भाग में 108 काव्य-रचनाएँ हैं। हिन्दी भाषा में लिखे इनके काव्य उत्तम श्रेणी के हैं। भाषा में प्रासादिकता तथा मधुरता है। इनके काव्य में मीराँ एवं महादेवी के काव्य जैसी भावानुभूति होती है।

कहान जी धर्म सिंह

कहान जी धर्म सिंह राजकोट नगर के निवासी थे। इनकी रचनाएँ ***'कहान काव्य'***, में संग्रहीत है जो ग्यारह खण्डों में विभक्त है। इन्होंने सौराष्ट्र के प्राचीन-अर्वाचीन लोक साहित्य का सर्वप्रथम संकलन किया है। ***'अध्याम भजन माला',*** भाग-1,2 नामक ग्रंथ में हिन्दी-गुजराती की कुछ काव्य-रचनाओं का संकलन भी इन्होंने किया है।

देवानन्द स्वामी

इनका मूलनाम देवीदीन गढ़वी था। स्वामी नारायण सम्प्रदाय में दीक्षा लेने के बाद देवानन्द स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनका जन्म गुजरात के भाल क्षेत्र के बालोल गाँव में सन् 1902 में हुआ।

इन्होंने गुजराती, ब्रजभाषा तथा राजस्थानी में विभिन्न राग-तालों में निबद्ध स्फुट संगीतात्मक पदों की रचना की है। इनके पदों में श्री कृष्ण के रूप-सौन्दर्य तथा भक्ति भावना का प्रभावी भाषा में अनूठा और मधुर वर्णन मिलता है। ये प्रथम आधुनिक कवि के रूप में स्वीकृत दलपतराम के गुरु थे। इन्होंने दलपतराम को 14 वर्ष की आयु में स्वामीनारायण सम्प्रदाय में दीक्षित किया था।

निर्मला देवी

इनका समय सन् 1925 के आस पास का है। इन्होंने वेदान्त, काव्य, दर्शनशास्त्र विषयक अनेक उपाधियाँ प्राप्त की। इन्होंने राधा-कृष्ण विषयक प्रेमलक्षणा भक्ति के काव्यों की रचना की है-***'निर्मल रासोत्सव' (कृष्ण पद-संग्रह), 'निर्मल-श्यामरस', (कृष्ण पद-संग्रह), 'निर्मल भाव कुसुम' (कृष्ण पद-संग्रह)', निर्मल रसोत्सव', 'निर्मल आसव', 'निर्मल श्यामसुधा' (हिन्दी)', 'निर्मल-निर्झरी'***(हिन्दी)', ***'निर्मल ज्योति'*** (हिन्दी) आदि। इन्होंने संस्कृत, गुजराती तथा हिन्दी में रचनाएँ की हैं।

नीलकंठ

ये बड़ौदा के निवासी थे। इन्होंने ब्रजभाषा में राधा-कृष्ण सम्बन्धी पद लिखे हैं। इनके एक पद से ज्ञात होता है कि ये श्रीमन्त मल्हारराव गायकवाड़ के समय में विद्यमान थे।

मनुभाई त्रिवेदी

मनुभाई त्रिवेदी ने 'सरोद' उपनाम से मार्मिक भजन लिखे है और 'गाफ़िल' उपनाम से ग़ज़लें। इन्होंने छन्दोबद्ध काव्य के साथ गद्य में वार्ताएँ, नाटिकाएँ और चिन्तन प्रधान लेख भी लिखे हैं। इनकी मृत्यु अहमदाबाद में सन 1971 ई. में हुई।

यशकरणजी अचलदानजी 'रत्नु'

पोरबन्दर राज्य के निवासी तथा सम्मानित राजकवि श्री यशकरणजी अचलदानजी 'रत्नु' 20वीं शताब्दी के आरंभ से लेकर 1966 ई. तक के समय में विद्यमान थे। ये चारण साहित्य-ग्रंथों के विशिष्ट अभ्यासी होने के साथ ब्रजभाषा पाठशाला के शिक्षित पण्डित थे। इनकी रचना ***'गृहस्थ धर्म-गुण प्रकाश बावनी'*** उल्लेखनीय है।

याकूब खाँ

याकूब खाँ 20वीं सदी के मुसलमान थे। ये बड़ौदा में रहते थे। ये 'जमादार याकूब अली खां गरबे वाले' के नाम से प्रसिद्ध थे। ये ब्रजभाषा प्रेमी तथा अपने समय से प्रसिद्ध गायक थे। इनकी ठुमरियों में कृष्ण-प्रीति और भक्ति-भावना व्यक्त हुई है।

मोतीराम कंडुजी

श्री मोतीराम का जन्म चंपानेर परगना के गोधरा महाल (जिला पंचमहाल) के गाँव शहरों (शिवपुर) में चित्रोडा नागर-परिवार में हुआ था। इन्होंने हिन्दी में कुंडलियाँ लिखी हैं। इन्होंने राधा, गोपी और कृष्ण से सम्बन्धित पद, नीति विषयक प्रकीर्ण पद और ब्रह्मज्ञान के पद लिखे हैं। इनके प्रमुख कृष्ण-काव्यों में ***'दाणलीला', 'चातुरी भाव-लीला', 'रासलीला', 'यशोदा जी का कृष्ण को पत्र', 'उद्धवजी के साथ गोपियों का कृष्ण को भेजा हुआ पत्र' (गरबी-पद), कृष्ण विरह के द्वादश मास, तिथि और वार के पद, शृंगार रस के पद (संख्या 33), 'ओधव जी का गरबा', 'थाल के पद' (संख्या 3), सुदामा चरित्र और नरसिंह महेता के पिता जी का श्राद्ध*** हैं। इन रचनाओं में मोती राम की गोपी भाव सम्पन्न प्रेमलक्षणाभक्ति भावपूर्ण शैली में अभिव्यक्त हुई है। इन्होंने ***वैराग्य के पद (संख्या 42), नीति-उपदेश के प्रकीर्ण छप्पय (संख्या 17) और हिन्दी में कुण्डलिया (संख्या 7)*** की रचना की है।

'करक'

हरकिसन लाल शिवलाल भगत 'करक' सूरत के निवासी थे। व्यापार-कारणों से उन्हें रंगून में बसना पड़ा। परन्तु सूरत उनके मन में बसा हुआ था। उनकी रचनाएँ ***'करक काव्य'*** (1930) में प्रकाशित हैं। सूरत शहर की मधुर स्मृतियों का वर्णन उन्होंने इस प्रकार किया है-

> ***''यह सुरत शहर गुलझार लाल रंग चटकी,***
> ***ज्युं शरद पूर्णिमा गगन चादँनी छटकी।''***[136]

गुजरात में हिन्दी का क्रमिक विकास हुआ किंतु नरसिंह महेता या अखा ने जो

कुछ रचा उसका स्वस्थ अनुगमन नहीं हुआ। अखा की भाषा में ब्रजभाषा की गरिष्ठता तथा विषय की गंभीरता तो थी किन्तु ब्रजभाषा का माधुर्य तथा उसकी सहजता नहीं थी। कालान्तर में दयाराम ने यह क्षति पूर्ण की। उन्होंनें भक्तिभाव के कीर्तन-पद, कवित्त, सवैया भी लिखे और दोहा छन्द का विपुल प्रयोग कर 'दयाराम सतसई' की रचना भी की जिसकी विवेचना अन्यत्र की जा चुकी है।

बाद में गोविन्द गिल्लाभाई तथा मेहरामणसिंह ने ब्रजभाषा-काव्य के सरस सौन्दर्य को प्रकट करते हुए बहुत ही समृद्ध और वैविध्यपूर्ण काव्य-सृजन किया। 'गोविन्द सागर' तथा 'गोविन्द ग्रंथावली' में इन्होंने ब्रजभाषा काव्य के उच्चस्थ मूल्यों को स्थापित किया। इसके साथ ही कच्छ (भुज) में स्थापित ब्रजभाषा काव्यपाठशाला ने भी अनेक सुशिक्षित तथा शास्त्रज्ञ ब्रजभाषा कवियों को तैयार किया जिन्होंने अपने कृतित्व से ब्रजक्षेत्रीय प्रख्यात कवियों की श्रेणियों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

प्रस्तुत अध्याय में गुजरात के ऐसे ही वरिष्ठ कवियों के उल्लेखनीय प्रदान की चर्चा करते हुए उनकी महत्ता तथा गुजरात में हिन्दी साहित्य-सृजन की वरिष्ठ परम्परा को रेखांकित किया गया है।

सन्दर्भ-ग्रंथ-सूची

1. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास' (प्राचीन एवं मध्यकाल), पृ0 43 ।
2. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 104-105 ।
3. 'गुजरात के संतों की हिन्दी साहित्य को देन', पृ0 32 ।
4. 'पुरानी हिन्दी', पृ0 118 ।
5. देखिए- 'गुजराती साहित्य का इतिहास' ।
6. 'कविचरित' - के. का. शास्त्री ।
7. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास' (प्राचीन एवं मध्यकाल), पृ0 93 ।
8. 'गुजरात के संतों की हिन्दी साहित्य को देन', पृ0 90 ।
9. 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 5 ।
10. 'मध्यकालीन गुजरात का हिन्दी काव्य', पृ0 17 ।
11. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 105 ।
12. वही, पृ0 105 ।
13. 'संवत् पंदर रुद्रनी वीस बरस ऊपरि एक च्यालिस ।'
    (हरिलीला-फलश्रुति)
14. 'संवत् पंदर रुद्रनी वीस षट आगलां बरस च्यालिस ।'
    (प्रबोध-प्रकाश, अंक 6)
15. 'गुजराती साहित्य ना मर्म सूत्रक स्तम्भो', पृ0 40 ।
16. 'साहित्येतिहास' - डॉ0 सुमनराजे ।
17. 'गुजराती साहित्य का इतिहास', पृ0 94 ।
18. देखिए - 'अखो एक अध्ययन', अखो अने मांडन - उमाशंकर जोशी, पृ0 72 ।
19. 'कविचरित' (भाग 1-2), पृ0 78 ।
20. 'कविचरित' (भाग 1-2), पृ0 79-85 ।
21. 'भजनरत्नाकर याने अमरवाणी', पृ0 243 ।
22. 'मध्यकालीन हिन्दी-गुजराती साखी साहित्य', पृ0 40 ।
23. देखिए - 'कविचरित' (भाग-1) ।
24. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 51 ।
25. 'मीराँबाई की पदावली', पद 23 ।
26. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास' (प्राचीन एवं मध्यकाल), पृ0 103 ।

27. वही, पृ0 103
28. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 198 ।
29. 'अष्टछाप परिचय', पृ0 224 ।
30. 'श्री कृष्ण लीला काव्य' में डॉ0 जगदीश गुप्त द्वारा उद्धृत पृ0 455 ।
31. 'राजस्थान और गुजरात के मध्यकालीन संत एवं भक्त कवि', पृ0 165 ।
32. 'श्री कृष्ण लीला काव्य' - डॉ0 जगदीश गुप्त ।
33. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 102 ।
34. वही, पृ0 128-129 ।
35. देखिए- 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 8 ।
36. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 127 ।
37. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 124 ।
38. देखिए -'दादू और उनकी धर्म साधना' ('पाटल' संत साहित्य विशेषांक)
39. 'परमार्थ सोपान' परिशिष्ट 1 - डॉ0 शुकदेव बिहारी मिश्र, पृ0 15 ।
40. 'हिन्दी की निर्गुण काव्यधारा और उसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि', पृ0 35 ।
41. 'दादू दयाल की बानी' - पं0 सुधाकर द्विवेदी, का0 ना0 प्र0 सभा ।
42. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 63 ।
43. 'उत्तर भारत की संत परम्परा', पृ0 413 ।
44. 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' - आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0 49 ।
45. 'संत दादू दयाल' - संपा0 काशीनाथ उपाध्याय, पृ0 12 ।
46. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 63 ।
47. 'संत दादू दयाल', पृ0 115 ।
48. 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 9 ।
49. 'मध्यकालीन हिन्दी-गुजराती साखी साहित्य', पृ0 42 ।
50. 'मध्यकालीन हिन्दी-गुजराती साखी साहित्य', पृ0 44-45 ।
51. वही, पृ0 45-46 ।
52. 'भक्त कवि राजे कृत काव्य-संग्रह', पृ0 19 ।
53. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 106 ।
54. वही, पृ0 108 ।
55. वही, पृ0 115 ।

56. 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 9-13 ।
57. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 79 ।
58. वही, पृ0 79 ।
59. वही, पृ0 79 ।
60. 'साहित्यकार अखो' - प्रकाश हरिभाई रा. देसाई, पृ0 3 ।
61. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 82 ।
62. 'संतप्रिया'-8 - अखा ।
63. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 120 ।
64. 'अक्षयरस', पद 11, पृ0 98 ।
65. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 166 ।
66. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 90 ।
67. 'साहित्यकार अखो' - प्रकाश हरिभाई रा. देसाई, पृ0 16 ।
68. देखिए- वही, पृ0 20 ।
69. 'गुजराती साहित्य का इतिहास', पृ0 110 ।
70. 'मध्यकालीन हिन्दी-गुजराती साखी साहित्य', पृ0 53-54 ।
71. वही, पृ0 54-55 ।
72. वही, पृ0 55-56 ।
73. 'शाक्त सम्प्रदाय' - दी. ब. नर्मदाशंकर दे. मेहता, पृ0 115 ।
74. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 205-207 ।
75. 'गुजराती साहित्य का इतिहास', पृ0 130 ।
76. 'साखी ग्रंथ', अंग चेतावनी को -20 ।
77. 'प्राचीन काव्य माला', भाग-10, पृ0 165 ।
78. 'निरान्त काव्य', पृ0 2 ।
79. 'वृहद काव्य दोहन', भाग-3, पृ0 765 ।
80. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 167 ।
81. वही, पृ0 164 ।
82. 'प्रीतमदासनी वाणी', पृ0 34 ।
83. वही, पृ0 51 ।
84. वही, पृ0 59 ।

85. वही, पृ0 97 ।
86. वही, पृ0 100 ।
87. वही, पृ0 151 ।
88. वही, पृ0 151 ।
89. वही, पृ0 351 ।
90. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 115 ।
91. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 132 ।
92. वही, पृ0 135 ।
93. 'कच्छना संतो अने कविओ' - दुलेराय काराणी, पृ0 84 ।
94. चौथी गुजराती साहित्य परिषद की रिपोर्ट ।
95. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 117 ।
96. वही, पृ0 171 ।
97. 'गबरी कीर्तनमाला', पद 558, पृ0 251 ।
98. 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 13-28 ।
99. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 152 ।
100. वही, पृ0 207 ।
101. 'मध्यकालीन हिन्दी-गुजराती साखी साहित्य', पृ0 63-64, 71 ।
102. देखिए -'भुज (कच्छ) की ब्रजभाषा पाठशाला' कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह ।
103. 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 57 ।
104. वही, पृ0 40 ।
105. 'डॉ0 अम्बाशंकर नागर अभिनन्दन ग्रंथ' में डॉ0 निर्मला आसनानी का लेख 'कच्छ की ब्रजभाषा पाठशाला', पृ0 315 ।
106. वही, पृ0 318-19 ।
107. 'कवीश्वर दलपतराय' -महाकवि न्हानालाल ।
108. 'कच्छना संतो अने कविओ' - दुलेराय काराणी ।
109. 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 15 ।
110. डॉ0 नागर का लेख - 'दयाराम की हिन्दी कविता', 'साहित्य', जुलाई 1954 ।
111. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 117-118 ।
112. 'डॉ0 अम्बाशंकर नागर अभिनन्दन ग्रंथ' में श्रीमती वन्दना खण्डेलवाल का लेख 'दयाराम विरचित ब्रजभाषा ग्रंथ', पृ0 341 ।

113. वही, पृ0 348 ।
114. 'मध्यकालीन हिन्दी-गुजराती साखी साहित्य', पृ0 78-79 ।
115. वही, पृ0 79 ।
116. 'दयाराम सतसई' की पद संख्या-191 -संपा0 अम्बाशंकर नागर ।
117. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 121 ।
118. ''ब्रजभाषा मां रचायेली बे कृतियो 'सतसैया' संवत् 1872 अने 'वस्तुवृन्ददीपिका' संवत् 1874 दयारामनुं पांडित्य अने बहुश्रुतता व्यक्त करे छे।''- 'दयाराम (गुजराती)' - डॉ0 भोगीलाल सांडेसरा, पृ0 8 ।
119. 'गुजरात के मध्यकालीन हिन्दी साहित्य', पृ0 ।
120. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 401 ।
121. 'अखानी वाणी अने मनहर पद', पृ0 415 ।
122. 'प्राचीन काव्यमाला' (भाग-5), पृ0 77 ।
123. डॉ0 नागर ने अपनी पुस्तक 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण' में 'लाँघसुधा' नामक अप्राप्य ग्रंथ का उल्लेख किया है।
124. 'श्रीछोटमनी वाणी' (भाग-3), पृ0 40 ।
125. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 131 ।
126. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 369 ।
127. वही, पृ0 371 ।
128. 'हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय' - डॉ0 पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ।
129. देखिए- 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 123 ।
130. वही, पृ0 123 ।
131. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 282-283 ।
132. 'कबीर अने कबीर सम्प्रदाय' -किशन सिंह चावड़ा, पृ0 167 ।
133. 'श्रवणाख्यान', पृ0 107 ।
134. 'अर्वाचीन कविता' - सुन्दरम्, पृ0 1965 ।
135. 'गुजरातीओऐ हिन्दी साहित्यमां आपेलो फालो', पृ0 31 ।
136. 'करक काव्य' से उद्धृत ।